



# MISSION MEDITATION

*Established by :*

Enlightened Mystic Gurumaiya Dr. Hareshwarideviji

## MAUN MANDIR

*(A place for silence)*

at. & po. Chapad, dist. Vadodara, Gujarat, INDIA

Ph. +91 9913153609, 7285085733



## जाग्रतावस्था ध्यान

प्रिय साधको!

हमारे शास्त्रों द्वारा मनुष्य की स्थिति को चार अवस्था में बाटा गया है। जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तूर्या।

साधारण मनुष्य के पास चौथी अवस्था का कोई अनुभव नहीं है, वह केवल प्रारंभिक तीन अवस्थाओं में ही जीवन गुज़ार देता है और ऐसे लोग ज्यादा हैं। इसलिए वे लोग ध्यान, समाधि, ज्ञान, तूर्यावस्था आदि अवस्थाओं का स्वीकार भी नहीं कर पाते हैं। क्यों? – क्योंकि उनकी क्षमता नहीं है ये सब विराट अनुभव लेने की।

साधारण स्थिति से थोड़े ऊपर उठे हुए लोगों को सत्संग, सद्वाचन, अध्यात्म आदि विषयों में रस होता है। उस रस की वजह से उन्हें वह माहौल अच्छा लगता है। परंतु केवल माहौल से रस पैदा हो जाएगा, ऐसा समझना गलतफहमी है। रस माहौल ढूँढ लेता है।

माहौल संभावनाओं को जगाने में मदद करता है, मनुष्य के मन को असर पहुंचाता है। माहौल मनुष्य को अपना रंग देने की कोशिश जरूर करता है। अगर भीतर के संस्कार हैं तो संस्कार के अनुसार के माहौल मिलते ही मनुष्य तुरंत ढल जाता है उनके अनुसार।

संस्कार हकारात्मक भी हो सकते हैं और नकारात्मक भी, अंततः तो दोनों प्रकार से ऊपर उठ जाना ही ज्ञान है। परंतु माहौल सिर्फ असर दे सकता है, माहौल एक टेस्टिंग है। भले या बुरे माहौल में घुल मिल जाने वाला व्यक्ति कौन से रस से जुड़ा है इसका पता चल जाता है। वह सत्वर परिणाम देने वाली एक लघुपरीक्षा है।

थोड़े और ऊपर उठे हुए लोग ध्यान के स्तर तक पहुँच सकते हैं। ऐसे लोगों की भक्ति भी ध्यान की कक्षा प्राप्त कर लेती है और ध्यान के माहौल की मदद से कुछ खास लोग समाधि अथवा तूर्या अवस्था में प्रवेश कर सकते हैं।

सामान्य रूप से हम भाषा में प्रमुख तीन अवस्थाओं का ही प्रयोग करते हैं। जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति। परंतु उसमें भी सत्य कहाँ! जाग्रत मनुष्य सही में जागा हुआ है?

मेरा काम आपको ज्ञान देना या धर्मगुरु बनकर उपदेश देना नहीं है। मैं यह कभी नहीं सोचती हूँ कि मैं परम ज्ञानी और मेरे सामने बैठे हुए सब मूढ़ या अज्ञानी।

मेरे पास आने वाले ज्ञानी ही हैं। अगर उन्हें ध्यान और संत समागम कल्याणकारी है, इस बात का ज्ञान नहीं हो गया होता तो क्यों आते मेरे पास?

खैर, मेरा काम सिर्फ आपको सचेत करना है सत्य के बारे में। सत्य बताया तो नहीं जाता परंतु उसके बारे में किसीको जगाया जरूर जाता है। मेरा काम आपको आपके ही बारे में सजग करने का है।

बाहर के भगवान के बारे में तो आप मुझसे भी ज्यादा जानते हैं। परंतु आपके भगवान के बारे में क्या हुआ? – इस विषय में आपकी सोच शुरू हो और फिर साधना शुरू हो तब तक ही मेरी भूमिका है। एक बार इतना आरंभ हो गया फिर स्टेज पर मैं भी नहीं और आप भी नहीं, सिर्फ सत्य बचेगा। चलते फिरते, खाते-पीते, उठते-बैठते मनुष्य को लोग कहते हैं कि वह जाग्रत अवस्था में है। परंतु आध्यात्मिक जाग्रति कुछ और ही है।

आप मुझे जवाब दीजिए क्या वास्तव में आप जाग्रत हैं? जरा प्रमाणिकता से सोचकर जवाब देना। आध्यात्मिक जाग्रति की अवस्था में एक विशेषता होती है और वही सही जाग्रतावस्था है। शायद उस विशेषता को दुनियाँ भले देख न पाए परंतु आप उसका अनुभव करने लगेंगे। आपके अंतर से आया हुआ प्रमाण ही सत्य है। और अगर वास्तव में आपकी जाग्रत अवस्था होगी तो कुछ खास लोग उसे समझ भी लेंगे।

प्यारे साधको!

उस वास्तविक जाग्रति के लिए मैं आपको एक ध्यान विधि देने जा रही हूँ। यह एक मौलिक ध्यान विधि है, मेरे अनुभव में से प्रगटी हुई ध्यान विधि है। वैसे तो सभी ध्यान विधियाँ मनुष्य को जगा देने का काम करती हैं परंतु जाग्रत अवस्था में भी ज्यादातर लोग अजाग्रत की तरह ही जीते हैं। ऐसे लोग सत्संग, कथा, योग विधियाँ, आसन और कभी कभी तो ध्यान विधियाँ भी अजाग्रति से ही करते हैं। ऐसे लोगों के लिए मुझे लगा कि उनको एक विशेष ध्यान विधि देनी चाहिए, उनकी तथाकथित जाग्रति में भी अजाग्रत आदमी की तरह जो वाणी-वर्तन



करते रहते हैं उन्हें देखते देखते, उसपर ध्यान देते देते ही वे ध्यान करने लगें और सही सही जाग्रतावस्था को प्राप्त कर लें।

मैंने देखा है, अजाग्रत मनुष्य ध्यान भी करेगा तो अजाग्रति में करेगा। और ऐसी मनःस्थिति में अन्य ध्यानविधियाँ उसकी मदद नहीं कर पाएंगी। ऐसे लोगों को मैं “जाग्रतभाव ध्यान” नाम की एक विधि दे रही हूँ। जो लोग अजाग्रत भी हैं और ज्ञान की प्यास वाले तथा ध्यान प्रेमी भी हैं ऐसे लोगों को यह विधि ज्यादा काम आएगी।

अगर आपको लगता है कि दुनियाँ की नजरों में तो आप जाग्रत अवस्था में हैं फिर भी अजाग्रत हैं तो आरंभ करो इस विधि में उतरना।

इस ध्यान में आपको ना सांस पर, ना शरीर के किसी सूक्ष्म बिन्दु पर, ना दीपक पर या ना ही किसी कुदरती वस्तु या दृश्य पर ध्यान करना है।

इस विधि में आपके केन्द्र में रहेगी आपकी प्रत्येक क्रिया, प्रत्येक विचार, प्रत्येक शब्द, प्रत्येक हरकत और प्रत्येक आवेश। कुछ लोगों को कुछ गलत आदतें होती हैं, अच्छे अच्छे लोगों में मैंने ये आदतें देखीं हैं। कुछ पढ़े लिखे लोग भी अकारण पैर हिलाते रहते हैं, कुछ लोग मुँह से नाखून काटते रहते हैं, कुछ लोग बोलपेन या ऐसी कोई चीज़ जो उसके हाथ में है, उससे अजाग्रति से खेलते रहते हैं।

ये सब क्या है? आज से अपने आप को देखना शुरू करो, बन जाओ आत्मगुरु। ये सब जाग्रति में अजाग्रति है। भीतर की विचलितता है। आदमी अगर भीतर से जाग्रत होता तो एकांत में या लोगों के बीच में ऐसी हरकतें नहीं करता।

आप जिसे जाग्रतावस्था कहते हैं उस अवस्था में आप ज्यादा से ज्यादा अजाग्रतिपूर्ण कार्य करते हैं। निद्राधीन मनुष्य ना क्रोध करता है, ना काम में उतरता है, ना लोभ करता है, ना अहंकारपूर्ण व्यवहार। कुछ लोग केवल निद्रा में ही स्थिर रह सकते हैं। निद्रा में भिन्न भिन्न विषयों में आसक्त होने का कोई मौका नहीं रहता। ऐसे चंचल और अजाग्रत लोग निद्रा में पड़े होते हैं शब की भांति, श्वास चल रही है, सोने वाला भी शांत है और ईर्द गिर्द के लोगों को भी शांति।

सजग मनुष्य जब सोता है तब उसके ईर्द गिर्द की या अड़ोस पड़ोस में रहने वाले लोग बकायदा प्रतीक्षा करते हैं कि वह कब जागे! क्योंकि सजग मनुष्य की निद्राधीन अवस्था में माहौल में एक रिक्तता का अहसास होता है। कुछ खाली खाली लगता है। एक चेतना की गैरमौजूदगी अखरती है।

अजाग्रत मनुष्य सोया हुआ होता है तो कोई समझदार आदमी उसे जगाना नहीं चाहता है। ऐसे लोगों का सोना अन्य के लिए शांति का अनुभव होता है। ऐसे लोग सोये हुए होते हैं तो लगता है कि एक बवंडर शांत हुआ है कुछ घंटों के लिए और लोग चिंतित रहते हैं कि कुछ घंटों के बाद फिर माहौल में हंगामा मचेगा।

भीतर की जाग्रतावस्था ही सच्ची जाग्रतावस्था है। जबतक भीतर की जाग्रतावस्था विकसित नहीं होती तब तक इन्द्रियाँ और शरीर की जाग्रतावस्था आपके लिए मुक्ति का द्वार नहीं बन सकती।

जिसे आप जाग्रतावस्था कहते हो वह केवल शरीर और इन्द्रियों की जाग्रतावस्था है, अंतरचेतना की नहीं। चेतना के ऊपरी स्तर द्वारा शरीर का कार्यरत रहना और इन्द्रियों का सक्रिय रहना ये चित्त की जाग्रतावस्था नहीं है।

चित्त की जाग्रतावस्था है अकर्ता भाव। चित्त की जाग्रतावस्था है, निर्लिप्त भाव। चित्त की जाग्रतावस्था है, क्रियाशील होने पर भी स्थिरत्व। चित्त की जाग्रतावस्था है, निरअपराध-निर्दोष एवं सरलावस्था। चित्त की जाग्रतावस्था है, विशुद्ध कर्म।

अहिंसा, अपरिग्रह, अक्रोध, अकाम, निर्लोभ, निरदंभ, निरअहंकार और निरममत्व चित्त की जाग्रति का परिणाम है। अब आप ही सोचो कि आप जाग्रतावस्था में हैं कि अजाग्रतावस्था में। मैं निर्णय आप पर छोड़ रही हूँ।

क्योंकि आप आपको जितने अच्छे ढंग से जानते हो उतना और कोई नहीं जान सकता। और अगर आप आपको भी ठीक ढंग से नहीं जान पाए हो तो, अगर आप आपसे ही परेशान हो तो, खुद से हार गए हो तो, खुद से ही घबरा गए हो तो शीघ्र ही मेरी बताई हुई इस ध्यान विधि में उतरने का आरंभ कर दो।

क्योंकि अगर ऐसा है तो केस ज्यादा बिगड़ गया है। मर्ज हृद से बढ़ गया है, रोग असाध्य होता जा रहा है। अब देर करना खतरा है आपके मनुष्य अवतार के लिए।

एक बार एक संत बैठे थे एक वृक्ष के नीचे कोई राहगीर निकला और राम राम करके पूछा – महाराज क्या कर रहे हो? संत ने कहा – “नींद से जाग रहा हूँ।” फिर दोपहर को वही आदमी वहाँ से गुजरा उसने फिर से पूछा – महाराज क्या कर रहे हो? संत ने कहा – “नींद से जाग रहा हूँ। तू भी जाग जा।” फिर इत्तेफाक से उसी रास्ते से शाम को तीसरी बार भी गुजरा, तीसरी बार भी वही जवाब मिला।

दृष्टांत बड़ा बोध पूर्ण है। कभी कभी प्रश्नकर्ता और उसका प्रश्न साधारण होता है परंतु जवाब असाधारण मिल जाता है। संत

हकीकत में सच्चा साधक रहा होगा। ये बात अलग है कि राहगीर संत को पागल समझकर चला गया। परंतु आप इस दृष्टांत से कुछ न कुछ अवश्य समझ लेंगे।

राहगीर तो हंसने लगा था संत का जवाब सुनकर, वो नहीं समझ पाया था कि कौन सी नींद से जागना है। उसे तो एक ज्ञानी को पागल मान लिया। और सोचा कि सुबह से बैठा है झोंपड़ी में, और कहता है कि नींद से जाग रहा हूँ, उसका दिमाग ठीक नहीं है।

सत्य बोलने वाले लोग दुनियाँ को अकसर पागल लगते हैं। दुनियाँ के पास क्षमता ही नहीं है सत्य सुनने की, समझने की, उसपर विचार करने की। आदमी की तैयारी ही नहीं है सत्य के साथ जीने की। मेरे बारे में सौ में से निन्यानवें लोग कहते हैं कि मेरे साथ रहना संभव नहीं है। अब मैं कहती हूँ कि मेरा किसीके साथ रहना संभव नहीं है। लोग जागते हुए भी नींद में हैं। यह कई जन्मों की अज्ञान की नींद है। निरर्थक संस्कारों के छाप की वजह से वे जागते हुए भी अजाग्रत जैसा व्यवहार करते रहते हैं। मनुष्य सदियों से ध्यान से बहुत दूर चला गया है।

बाहरी धर्मों से आश्वासन लेने वाला मनुष्य आत्मजाग्रति का परम धर्म भूल चुका है। जो धर्म सिर्फ ध्यान के द्वार ही सीखा जा सकता है। मनुष्य जाग्रतावस्था में इच्छापूर्ति, स्वार्थपूर्ति एवं आवश्यकतापूर्ति के सिवाय और कुछ सोचता ही नहीं है। अजाग्रत अवस्था में की हुई इच्छा पूर्ति और इच्छा के विचार बंधन बन जाते हैं।

अजाग्रति में पनपी हुई स्वार्थ वृत्ति आदमी को विनाश तक ले जाती है। और अजाग्रत अवस्था में जो जरूरतें पूरी हुई हैं इससे केवल स्थूल का विकास होता है, सूक्ष्म का नहीं।

बेहोशी में किया हुआ भोजन स्वास्थ्य से ज्यादा रोग को जन्म देता है, बेहोशी में देखे हुए दृश्य भीतर कचरा इकट्ठा करता है, अजाग्रति से सुने हुए शब्द अनर्थ पैदा करते हैं, अजाग्रतावस्था में बोले हुए वचन क्लेश को जन्म देते हैं।

मनुष्य सदियों से ऐसा कर रहा है। उसने अनेक पीढ़ियों को अजाग्रति का रोग खून में दे दिया है। मनुष्य जब तक स्वेच्छा से तैयार नहीं होगा अजाग्रति से मुक्त होने के लिए तब तक इस रोग को मिटाना असंभव है। यह अजाग्रति पूरी मनुष्यता के लिए खतरा है। हर प्रकार के बॉम्ब और मिसाइल्स से भी ज्यादा भयानक है। इसका एक ही इलाज है—ध्यान।

अजाग्रतावस्था मानव मानव के बीच में सिविल वोर को जन्म देती है। यह सीधा नहीं दिखाई देता है। परंतु यह आंतरयुद्ध मनुष्य को अपार वैभव, सुख, समृद्धि और बाहर की शिक्षा मिलने पर भी चैन से सोने नहीं देता।

मैं कहती हूँ कि अजाग्रति एक मनोकैन्सर है। जो मनुष्य को धीरे धीरे खत्म कर देता है। साधक अगर चाहे तो उससे मुक्त हो सकता है। इस कैंसर में कीमोथैरापी काम नहीं आ सकती।

इसका इलाज है ध्यान। और मेरी यह जाग्रतिभाव ध्यान विधि सबसे ज्यादा मदद कर पाएगी चंचल मन के मनुष्य की। इस विधि में आप आपको ही देखते रहो। देखते रहो अपने व्यवहार को, अपने वर्तन को चलते-फिरते, उठते-बैठते, बोलते इस तरह से देखो खुद को कि आप भिन्न हो और वह अजाग्रतिपूर्ण व्यवहार करने वाला भिन्न है। प्रत्येक हरकतों का बारीकी से अभ्यास करते रहो।

विधि में उस हद तक डूबो कि अजाग्रति में अनावश्यक व्यवहार गलत हरकतें, अनर्गल बकवास और अवेद्य व्यवहार करने वाला एक अबोध, बेचारा आदमी जो अपने कटु सत्त्यों से अंजान है उसकी आप मदद कर रहे हो। और इस भाव से देखना शुरू कर दो अपनी मनोदैहिक हरकतों को कि जैसे एक गुरु शिष्य पर नजर रखते हैं। बन जाओ आत्मगुरु।

जिन जिन कार्यों में अजाग्रति झांक रही हो उसको देखना आरंभ करो जाग्रति के साथ। शारीरिक ऊर्जा जो कुछ भी कर रही है उसे आंतरिक चेतना के प्रकाश में देखते रहो। प्रत्येक क्रिया के प्रति प्रतिपल सजग रहो। चित्त को सक्रिय रखो अजाग्रति के पीछे। हाँ, ऐसा करते करते हो सकता है कि कभी कभी आपको अपने ऊपर क्रोध भी आ जाए या आप आपको ही नफरत करने लगो अथवा आप खुद की आदतों से ऊब जाओ या खुद से शर्मा जाओ। स्वयं पर धिक्कार या तिरस्कार भी पैदा हो सकता है। परंतु ऐसी नकारात्मक भावना जब भी मन में आए तो तुरंत अपने दृष्टा को जगा लो। साधना की प्रारंभिक अवस्था में हो सकता है। परंतु ऐसा सबकुछ होने का कारण भी अजाग्रति ही है। ऐसी स्थिति में ज्यादा सजग हो जाओ। क्योंकि अगर आप स्वयं के ऊपर आते हुए क्रोध या तिरस्कार अथवा अपराध भाव की पकड़ में आ गए तो ज्यादा विकृत हो जाएंगे।

विश्व में दो प्रकार के लोग आत्महत्या करते हैं। एक तो ऐसे लोग कि जिसके लिए संवाद के और सहानुभूति के सारे द्वार बंद हो गए हैं। कहीं से भी सहायता नहीं मिल रही है। विश्व में ऐसी कोई संभावना नहीं बची है कि जहाँ उसे प्रेम, अपनापन, स्नेह या सहारा मिल सके। अच्छे और तंदुरस्त रिश्ते को अर्जित नहीं कर पाने की वजह से ऐसे लोग निराश, हताश और दुखी हो जाते हैं। जीवन निरर्थक लग रहा है। ज्ञान किरण का कोई बोध नहीं है। इस वजह से अकेलेपन और एकांत से घबराकर बिखर जाते हैं। और जिन्दगी से हार मानकर आत्महत्या

कर लेते हैं।

दूसरे प्रकार के लोग खुद से ही तंग आ गए होते हैं। उन्हें पता है कि खुद गलत है परंतु सुधारा नहीं हो सकता। खुदको बदलने के सारे प्रयास कर लिए परंतु अहंकार ने सफल नहीं होने दिया। अपनेआप से थक गए, हार मान ली है खुद के हठीलेपन के सामने। उन्होंने जान लिया है कि वे झूठे हैं परंतु झूठेपन का स्वाकार भी नहीं कर सकते हैं।

उसकी अजाग्रति में से जन्मा हुआ अहंकार दीमक लगे हुई सूखे पेड़ के टूट की तरह है; वह टुट सकता है, सड़ सकता है, जल सकता है परंतु फिर से पल्लवित नहीं हो सकता। झुक नहीं सकता।

उन्हें पता है कि खुद नींद में है, परंतु उन्हें जागना नहीं है। जागने से सुख है, ऐसा जानने पर भी नहीं जाग सकता है। कैसा दुर्भाग्य! ऐसे लोग भी मन में अपराध भाव महसूस करते हैं। उनमें आत्मधिकार पैदा होता है। कहीं भी समायोजन नहीं साध सकते हैं अपने मिथ्या अभिमान के कारण। और अंत में आत्महत्या कर लेते हैं।

हिटलर ने क्यों कर ली थी आत्महत्या? सूक्ष्म रूप से उसको अपने किए हुए कर्मों के कारण आत्मधिकार पैदा हो गया था। आत्मगौरव से तो मुक्ति की ओर प्रयाण होता है, मृत्यु की ओर नहीं।

एक तीसरे प्रकार की आत्महत्या है। जो मनुष्य आजीवन अजाग्रति के साथ जिया और मूढ़तापूर्ण व्यवहार करते करते मरा, तो वह भी अंजाने में एक प्रकार का आत्मघाती अभीगम ही है। ऐसी मृत्यु को दुनिया भले स्वाभाविक मृत्यु कहे परंतु मैं मनुष्य अवतार की अंजाने में की हुई आत्महत्या की।

प्रिय साधको!

तीनों प्रकार की आत्महत्या से ऊपर उठ जाओ आप। स्वयं के मूढ़तापूर्ण वाणी, वर्तन और व्यवहार को देखते देखते खुद को धिक्कारना नहीं सीखना है। मैं जो विधि बता रही हूँ वह आत्मनिंदा के लिए नहीं है, आत्महत्या के लिए नहीं है, परंतु आत्मकल्याण के लिए है।

आपको न्याय नहीं करना है। आपको आपका न्यायधीश नहीं बनना है। इस विधि में आप यह तय नहीं करेंगे कि क्या करना है, क्या नहीं करना है? आपको आपकी बुद्धि की जड़ता और मन की बेहोशी के साथ कोई दमन, कोई चंचुपात, कोई निर्णय या न्याय नहीं करना है।

सिर्फ दृष्टा बनकर देखते रहो उस वर्तन को कि जो कुछ भी आपकी अजाग्रति कर रही है। इतनी समग्रता से देखना है कि देखते देखते ही आपका दृष्टा प्रगट हो जाए। दृष्टा का जन्म होते ही आप और मनोदैहिक व्यवहार दोनों अलग हो जाएंगे।

दृष्टा पैदा होने के साथ ही जाग्रति का विकसित होना प्रारंभ हो जाएगा और धीरे धीरे अजाग्रति अदृश्य हो जाएगी। विधि की गहनता के साथ ही आप स्वयं जागृतिरूप बनते जाएंगे।

जागृति गहन होते ही भीतर व्यवस्थाएं जन्म लेने लगेंगी। बस, देखते रहें अंतर की आंख से, मन के खेलों को।

देह की चंचलता को, इन्द्रियों की विवशताओं को और मन की इच्छाओं को देखते जाओ, देखते जाओ सजगता के साथ। आपके भीतर एक दृष्टा की उपस्थिति के कारण धीरे धीरे सबकुछ खो जाएगा अर्थात् रूपांतरित हो जाएगा।

और एक दिन अचानक शिवभाव में आपका प्रवेश हो जाएगा। फिर कोई गलत हरकत करने वाला नहीं बचेगा और ना ही हरकतें बचेंगी। फिर अगर कुछ बचेगा तो एक चलती फिरती विशुद्ध चेतना और आंतरिक व्यवस्था। जिसका प्रतिबिंब सहज ही बाहर भी दिखाई देगा। वही है शिवावस्था, जाग्रतावस्थाभाव। ध्यान की चरम सीमा में परम कल्याण घटित हो जाएगा।

## धरणा - ३७

### स्वप्नावस्था ध्यान

प्रिय साधको!

सुनकर आपको आश्चर्य जरूर होगा परंतु मैं कहती हूँ कि स्वप्न पर भी ध्यान हो सकता है। जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति और तूर्या; मनुष्य की इन चार अवस्थाओं में से एक महत्वपूर्ण अवस्था है—स्वप्नावस्था।

मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि प्रत्येक मनुष्य अनिवार्य रूप से प्रत्येक रात में थोड़े बहुत स्वप्न देखते हैं। परंतु मेरा अनुभव कहता है कि ध्यान के द्वारा आप स्वप्नों से मुक्त हो सकते हैं। अर्थात् स्वप्नावस्था पर विजय प्राप्त कर सकते हैं।

मैं आपको एक ऐसी विधि देने जा रही हूँ कि जो विधि आपको स्वप्नशून्यता के लिए करनी है। मेरी बात का अर्थ ऐसा मत करना कि



आपको स्वप्न में ध्यान करना है। अपना मनगढ़ंत अर्थ मत लगा लेना। ध्यानमार्ग में अपरिपक्व लोगों ने बहुत अनर्थ कर दिया है इस मार्ग में। विधि को समझकर आपको स्वप्नावस्था पर ध्यान करना है। आपका पूरा पूरा ध्यान अर्थात् आपकी अंतरचेतना केन्द्रित हो जानी चाहिए उस अवस्था की ओर।

मनुष्य का मन इतना अद्भुत है कि उसकी अपार और अजाग्रत शक्तियों को जगाकर वह जी चाहा परिणाम हांसिल कर सकता है। ध्यान से सुनिए, जैसे मन की नकारात्मक शक्तियाँ हैं वैसे हकारात्मक शक्तियाँ भी हैं। परंतु मनुष्य उसका उपयोग करना नहीं जानता।

अगर एक बार मनुष्य ने उस मन को अपने वश में करके अपने आध्यात्मिक विकास को अथवा अतिचेतस शक्तियों का अनुभव करने के लिए इस्तेमाल करना सीख लिया तो फिर मन आपके निकट का साथी सहयोगी और सर्व सिद्धि का आधार बन जाएगा।

खैर, मैं इतना ही कहूँगी कि जब जानोगे तो कुछ पाने की भावना करोगे और कुछ प्रयास करोगे तो कुछ प्राप्त कर लोगे। इस विधि में आपको शयन के पहले ऐसी धारणा करनी है कि आज मुझे कोई स्वप्न नहीं आएँगे। अगर स्वप्न आया भी तो मैं उस स्वप्न को स्वप्न से भिन्न होकर देखूँगा।

क्योंकि वे स्वप्न मेरा वर्तमान नहीं हैं अथवा वह मेरा वर्तमान सत्य नहीं हैं। वह मन की एक माया जाल है। अगर वे स्वप्न सत्य भी होने वाले हैं तो भी मैं और स्वप्न दोनों अलग अलग हैं।

मैं शुद्ध चैतन्य हूँ। एक चलती फिरती जाग्रति हूँ। स्वप्न को पैदा करने वाला है मन स्वप्न को देखने वाला भी मन है। जो कर्ता भाव था अथवा है वह स्वप्न में कार्यरत है। वह भाव मन का बनाया हुआ है। वह मन ही अपनी बनाई हुई सृष्टि के सुख दुख को पाता है। मैं उससे भिन्न हूँ, मैं स्वप्नों का अर्धसत्य अथवा असत्य का दृष्टा मात्र हूँ।

माया, भ्रम और स्वप्नजगत ये सब मेरे लिए एक चित्र मात्र हैं। ऐसे कई चित्र मैं दिनभर खुली आंख से भी देखता हूँ। स्वप्न में ऐसे कुछ चाहे अनचाहे चित्र चल रहे हैं, बदल रहे हैं। वह एक चलचित्र जैसा है। स्वप्न में जो दिखाई दे रहा है वह मेरा भ्रामक रंग रूप है, मैं नहीं हूँ। मैं तो चलती फिरती जाग्रति मात्र हूँ।

प्रिय साधको !

विज्ञान भैरव तंत्र श्वास को तीसरे नेत्र में स्थिर करने की धारणा देकर इसी ध्यान विधि के बारे में कुछ कहता है।

परंतु मेरे अनुभव से मैं कहती हूँ कि श्वास तीसरे नेत्र पर केन्द्रित करने में हो सकता है कि आपका मन श्वास के प्रति रुके, साक्षी भी जग जाए परंतु स्वप्न का दृष्टा बनने की धारणा शायद छूट भी जाए। ऐसे कई लोग मेरे पास आए हैं कि हम स्वप्नमुक्त होने के लिए विज्ञान भैरव तंत्र की श्वास को तीसरे नेत्र में स्थिर करने की धारणा करते हैं परंतु ध्यान करते हैं तब तक शान्ति मिलती है; चित्र विचित्र स्वप्नों से मुक्त नहीं हो पाते हैं।

ऐसा हो सकता है क्योंकि प्रत्येक विधि प्रत्येक मनुष्य को रास न भी आए। मुझे भी लगा कि स्वप्न की वेदना से करीब करीब सभी लोग पीड़ित हैं। परंपरागत विधि से ध्यान ज्यादा कठिन हो जाए इससे तो बेहतर से कि स्वप्नपीड़ित साधको के लिए एक मौलिक विधि का आविष्कार हो जाए।

तो मैंने इस विधि का एक अर्थ में नए स्वरूप में पुनः आविष्कार किया है। मैं एक नई धारण के साथ यह विधि अत्यंत सरल बनाकर दे रही हूँ।

अपनी श्वास के साथ कुछ मत करो। उसको अपनेआप उसकी सहज गति में चलने दो, बहने दो अपने रक्त में शान्ति से। और स्वप्न से मुक्त होने के लिए शयन खंड में जाने से पहले देह को स्वच्छ करो। दिन में पहने हुए वस्त्रों को बदलकर ढीले एवं शुद्ध वस्त्रों को धारण करो। वस्त्र पुराने होंगे तो भी चलेंगे, परंतु शुद्ध और अनुकूल होने चाहिए।

बहुत सहजता से शयन खंड में प्रवेश करके अपने बिस्तर पर शान्ति से लेट जाओ। मैं यह नहीं कह रही हूँ कि विज्ञान भैरव की विधि उपयुक्त नहीं है। वह भी श्रेष्ठ है, परंतु एक ही मंजिल पर जाने के लिए अनेक रास्ते हो सकते हैं।

इसी तरह से स्वप्न मुक्ति के लिए भी एक से ज्यादा ध्यान विधियाँ प्रयुक्त हो सकती हैं। हर विधि एक रास्ता है। मैं चाहती हूँ कि आपका आत्मबल और संकल्पशक्ति इतनी बढ़े कि उस संकल्प शक्ति के बल मात्र से ही मन का उपयोग करके स्वप्न जगत से मुक्त हो जाओ।

प्रिय साधको !

इस विधि में आप आपके मनको तीव्र धारणा देकर ही स्वप्न पर सत्ता पा सकते हो।

जब आप उनिंदा महसूस करो, जब आपको लगे कि अब नींद का अहसास हो रहा है, शरीर आराम की ओर तथा चेतना शांति की ओर जा रही है तब शुद्ध बिस्तर में लेटकर धारणा का आरंभ करो। इस धारणा से एक एक पड़ाव से उतरकर परिणाम घटेगा।

प्रारंभ में स्वप्न कम हो जाएंगे। और जो स्वप्न आपको सता रहे थे, ऐसे स्वप्नों की चिंता से धीरे धीरे आप मुक्त होने लगेंगे। आपका आत्मबल बढ़ने लगेगा।

दूसरे स्टेप में स्वप्न को आप एक दृष्टा की भांति देख पाएंगे अर्थात् आपके स्वप्न में आपके होते हुए भी आपके भीतर बोध जगा रहेगा कि वह अलग है और आप अलग।

तीसरे स्टेप में स्वप्न पर आपका अधिकार हो जाएगा और आप किसी भी वजह से जाग जाने के कारण अधूरे छूटे हुए स्वप्न को पूरा करने के लिए, उसे कन्टीन्यू करने के लिए सक्षम हो जाएंगे।

चौथे पड़ाव में मन चाहे स्वप्नों का सर्जन भी कर लेंगे। और पाँचवे पड़ाव में संपूर्ण स्वप्नमुक्ति की अवस्था को प्राप्त कर सकेंगे।

बहुत धैर्य के साथ करने की यह विधि है। इस विधि के लिए तीव्र धारणा अनिवार्य है। दृढ संकल्प के बिना इस विधि में समफता प्राप्त नहीं हो सकती। आपकी धारणा अगर कमजोर पड़ गई तो परिणाम नहीं आएगा।

आपको एक प्रश्न उठ सकता है। कि क्या फायदा इस विधि से? ऐसी विधि क्यों ढूंढी आपने? स्वप्न, जो सत्य ही नहीं तो क्या तकलीफ है स्वप्न से? – कि ऐसा ध्यान करें!

अगर आपके मन में ऐसा प्रश्न उठे तो आप एक सजग साधक हैं, एक समझदार और भाग्यवान साधक हैं। लोगों को सही प्रश्न उठते ही नहीं और उनके निरर्थक प्रश्नों का कभी शमन नहीं होता है। कुछ लोग जिन्दगी में समाधान चाहते ही नहीं हैं। केवल संशय खड़ा करना जानते हैं। ऐसे लोग घर में और बाहर प्रश्न ही खड़े करते हैं। ऐसे लोग ध्यान के लिए नहीं हैं। स्वप्न के बाद आप साक्षी रह सकते हो, आपके मन पर उसका बुरा असर नहीं आता है तो आपको ऐसे ध्यान की जरूरत नहीं – अन्य बहुत सारी विधियाँ हैं जिसे आप कर सकते हैं, परंतु लोग स्वप्न से घबरा जाते हैं। स्वप्न में बोलने लगते हैं, चलने लगते हैं और जागने के बाद भी चिंतित रहते हैं ऐसे लोगों के लिए यह विधि है।

स्वप्न जगत मनुष्य के अर्धचेतन और अचेतन मन का परिणाम है। आपके अचेतन मन में और अर्धचेतन में रोज रोज हज़ार हज़ार चित्र और विचार बनते बिगड़ते रहते हैं। आपका अनकॉन्शियस और सबकॉन्शियस माइन्ड हज़ार हज़ार योजनाएं और इच्छाएं करते हैं। कभी कभी वहाँ काम क्रोध लोभ आदि के असंख्य वलय उठते रहते हैं। ये सब हंगामा आपके भीतर होता रहता है। और आपको पता तक नहीं। आपके मन ने बहुत कुछ कचरा एवं अननत योजनाएं इकट्ठी करके रखी है आपके ही भीतर आपकी जानकारी के बाहर। मन एक आतंकवादी की तरह दंगा फसाद करता ही रहता है आपके भीतर।

जब आप जागते हो तब तो दुन्यवी जिम्मेदारियों में इतने व्यस्त होते हो कि उस अचेतन को अथवा अर्धचेतन को व्यक्त होने का मौका ही नहीं मिलता। परंतु जब आप सो जाते हो तब कुदरती व्यवस्था के अनुसार आपका चेतन मन भी सो जाता है। तब आपको थोड़ी बहुत शांति प्राप्त हो जाती है।

जिसका चेतन मन नहीं सोता है उसे निद्रा नहीं आती। ऐसे लोग या तो कोई योगी, फकीर या ध्यानी हो सकते हैं अथवा कोई विरही, शत्रु से पीड़ित या देवालिया हो सकता है।

कामी, कर्जे के भार से दबा हुआ और शत्रुता से पीड़ित आदमी को चेतन मन को सुलाने के लिए नशा करना पड़ता है या नींद की दवाईयां लेनी पड़ती हैं। मस्त फकीरों के लिए तथा योगी एवं ध्यानीयों के लिए यह अवस्था अनिद्रा नहीं है। परंतु निद्रा मुक्ति है। वे जागते रहते हैं और साधना करते रहते हैं। या कुछ रचनात्मक प्रवृत्ति में जागरण का उपयोग कर लेते हैं।

खैर, चेतन मानस जब नींद के द्वारा बेहोशी में जाता है तब शरीर गहरे आराम की अनुभूति करता है। अब चेतन मन की गैरमौजूदगी में अचेतन और अर्धचेतन मन को मौका मिल जाता है व्यक्त होने का। वह धीरे धीरे अपना काम शुरू कर देता है।

उस मन के पास स्थूल शरीर का आधार तो है नहीं। तब वह सूक्ष्म देह का आधार ले लेता है। और उस आधार से वह प्रगट होने लगता है। उसे कहते हैं स्वप्न।

अचेतन और अर्धचेतन मन अपनी सारी भड़ास उस सूक्ष्म देह के पास कुछ काल्पनिक प्रवृत्तियाँ कराकर बाहर निकालता है। काल्पनिक इसलिए कहती हूँ कि वह मन ने अपनी कल्पना के द्वारा ही पैदा किया हुआ आपके आकार का सूक्ष्म देह है।

अचेतन में पड़ी हुई अतीत की घटनाएं, अधूरी वासनाएं, बदले की भावनाएं, मन का भय, भविष्य की योजनाएं सबकुछ इकट्ठा करके उसे एक कहानी के सूत्र में जोड़कर जो अनरगल बकवास एक चलचित्र की भांति भीतर शुरू हो जाता है वह बन जाता है एक स्वप्न।

आपने स्वप्न तो अवश्य देखे होंगे। इसका कोई रंग ढंग नहीं होता, कभी कभी तो आरंभ से अंत तक कोई संबंध नहीं होता परस्पर जुड़ी हुई घटनाओं और पात्रों का। आप स्वप्न में कुछ और भेष, कुछ और उम्र तथा कुछ और भाषा में होंगे। जिसके साथ आपके वर्तमान का कुछ भी लेना देना नहीं होता।

जिन लोगों को आप बरसों से मिले नहीं हो या एकाध बार मिले हो ऐसे लोग स्वप्न में आपके साथ होंगे। कभी कभी बिछड़े हुए स्वजन, शत्रु और प्रेमी-प्रेमिका के साथ हंसते हैं, रोते हैं, झगड़ते हैं, प्रेम भी कर लेते हैं।

स्वप्न के लोग अलग, घर अलग, माहौल अलग, आप अलग फिर भी वहीं के वहीं। आप जागकर कहते हैं कि स्वप्न में मैं छोटा था, या बड़ा था, मैं कुछ अजीबोगरीब ढंग से कुछ व्यवहार कर रहा था। ये सब क्या है ?

वह मन की कल्पना के द्वारा बने हुए शरीर के साथ मन ही खेल रहा है। स्वप्न में से जागने के बाद तो स्वप्न की घटना की स्मृति मात्र बचती है। मन स्वप्न में आपकी सारी बाजी बिगाड़ देता है अथवा आपकी कल्पना का स्वर्ग भी खड़ा कर लेता है; जो वास्तविक नहीं है।

जयदत्त नाम का एक मेरे भाई का लड़का है शायद १७ साल का है। वैसे भी थोड़ा स्वप्न दृष्टा है। उसके सपने बहुत बड़े हैं, कभी कभी वह आश्रम में रहने आता है। एक सुबह उठकर उसने मुझे कहा कि माँ आज स्वप्न में मुझे मुकेश अंबाणी आया। मैंने कहा अच्छा, फिर क्या हुआ ? तब बोला कि उसने मुझे कहा कि मुझे दो रुपये दो ना ! मेरे पास तो चार रुपये थे, मैंने उनसे कहा कि दो नहीं चार ही रख लो। मैंने पूछा फिर क्या हुआ ? उसने कहा फिर तो आंखें खुल गई.....। हम दोनों खूब हंसे।

बच्चे तो बच्चे होते हैं। उसकी जेब में ज्यादा पैसे भी नहीं होते तो उसका मन चार रुपये तक ही दे सकता है। ये तो ठीक है परंतु मजे की बात यह है कि अंबाणी मांग रहा है। यह है स्वप्न की दुनियाँ। बच्चे के अचेतन मानस या अर्धचेतन मानस ने खुली आंख से कुछ स्वप्न बना लिए होंगे कि दुनिया का सबसे बड़ा आदमी बनना है। मन ने उसके विचार और छबियों को जोड़कर एक चलचित्र देख लिया। सत्य तो यह है कि स्वप्न आखिर स्वप्न है। सार्थक हुआ स्वप्न हो तो भी ठीक है और कल्पना का हो तो भी ठीक है। परंतु विश्व में शाश्वत कुछ भी नहीं है।

खैर, मैं कहना चाहती हूँ कि आपकी इच्छाएं और वासनाएं जितनी ज्यादा उतने स्वप्न भी ज्यादा। मन जितना ज्यादा दूषित स्वप्न भी उतना दूषित, मन खुशी में तो स्वप्न में भी मज़ा।

जितना अचेतन मन बड़ा उतनी स्वप्नों की संख्या ज्यादा। भीतर जितना कचरा ज्यादा, उतने खतरनाक स्वप्न। जितनी हिंसा और क्रोध अथवा अतीत के दुष्कृत्यों का भार ज्यादा, उतना अपराधभाव ज्यादा। इसकी वजह से स्वप्न भी भयानक। मन जितना भीरू, स्वप्न उतने डरावने। मन जितना कामी, स्वप्न उतने विषय वासना पूर्ण। मन में जितनी सात्विक इच्छाएं, स्वप्न उतने धार्मिक और पूजा पाठ से भरे।

मेरे पास एक भक्त आया, हनुमान जी का परम प्रेमी है वह, आदमी भी बहुत अच्छा। उसने कहा - माँ मुझे हनुमानजी सपने में आए। मैंने कहा फिर क्या हुआ ? तब बोले कि राम रावण युद्ध के दौरान लड़ते लड़ते हनुमानजी बहुत थक गए थे। उन्हें भूख लगी थी, उन्हें ने कहा कि बेटा कुछ खाने का इंतजाम कर, मैं अब चलना नहीं चाहता हूँ, मैं अब बहुत थक गया हूँ। मैंने ने कहा बैठ जाओ मेरे कांधे पर मैं आपको भोजन कराकर लाता हूँ। वे बैठ गए और मैं उन्हें एक होटल में भोजन कराकर ले आया। फिर मैं खूब हंसी, इस बात को याद करके आज भी बहुत हंसती हूँ। कितनी प्रबल होंगी भक्त की भावनाएं, एक अकल्पनीय बात को भक्तिपूर्ण मन ने स्वप्न में सत्य बना दिया। हनुमानजी तो कांधे पर कुछ भी उठा सकते हैं, राम लक्ष्मण दोनों को बिठा लेते हैं, परंतु हनुमान को इस भक्त ने कांधे पर बिठा लिया ये मजे की बात है।

स्वप्न के द्वारा पता चलता है कि आपके भीतर क्या भरा है ? स्वप्न मुक्ति का एक अर्थ है मन से मुक्ति। मन की गंदगी जब तक पूरी तरह से बह नहीं जाएगी, जब तक मन का विशुद्धिकरण नहीं हो जाएगा तब तक स्वप्न जगत से आप स्वतंत्र नहीं हो पाएंगे।

हाँ, कुछ स्वप्न भविष्य में घटने वाली घटनाओं के प्रति इशारा करते हैं। परंतु वह कुछ विशिष्ट क्षणों में अथवा विशुद्ध क्षणों में अथवा कुछ विशेष आत्माओं के साथ ही घटित होता है। ये अस्तित्व की ओर से एक इशारा है। जो सबको नहीं मिलता और सब उसे समझ भी नहीं पाते।

उन स्वप्नों के बारे में मुझे अभी बात भी नहीं करनी है। यहाँ तो अचेतन मानस ने जो कूड़ा करकट इकट्ठा करके रख है और स्वप्न में वह एक चलचित्र की भांति दिखाई देता है उस मुद्दे पर ध्यान दीजिए। और याद रहे ! कुछ ध्यान विधियाँ ऐसी हैं, जिसे गुरु के मार्गदर्शन में ही करने का आदेश दिया है। इसके दो कारण हैं। एक तो गुरु आपको बताएगा कि कौन सी विधि कब करनी है-अर्थात् आपके शुद्धिकरण के स्तर को देखकर अथवा मन की अवस्थाओं को देखकर गुरु विधि देगा।



इसके लिए दो पांच घंटे से नहीं चल सकता। जब आप गुरु के सानिध्य में कम से कम छः महीने रहेंगे तब आपके समग्र बंधारण का पता चलेगा गुरु को।

दूसरी बात यह है कि विधि के दौरान आपको कुछ प्रश्न उठें, कभी कुछ झलकियाँ मिल जाएँ। साधना में कुछ अधूरा लगे या विधि के साथ कुछ असुविधा हो तो गुरु के पास बैठकर सम्यक समाधान पा सकेंगे।

दूसरी बात भी याद रखना कि ध्यान के लिए वही गुरु बन सकते हैं जो ध्यान विधियों में से गहराई से गुजरा हो। जिसने ध्यान को पिया हो। जिसका ध्यान से देह और चमड़ी जैसा गहन नाता हो।

ऐसा मत करना कि आप ध्यान की प्रेरणा कहीं और से लें और प्रश्न उठे या तकलीफ हो तो आपके सांप्रदायिक या कंठी गुरु के पास चले जाओ। हाँ, अगर उनके पास ध्यान की अनुभूति है तो अवश्य आपकी कुछ मदद कर पाएँगे। परंतु अगर ऐसा नहीं है तो आपके प्रश्न से वे बेचारे बन जाएँगे। वे आपकी मदद भी नहीं कर पाएँगे और विचलित भी कर देंगे। वे कहेंगे कि ध्यान-व्यान छोड़ो और राम-राम, कृष्ण-कृष्ण की माला जपो।

ऐसी परिस्थित में आपके भीतर थोड़ा बहुत भी आध्यात्मिक माहौल तैयार हुआ होगा तो वह भस्मीभूत हो जाएगा। आपने पाई हुई सारी स्थिरता तहस-नहस हो जाएगी और फिर से एक बार आप भटक जाएँगे।

खैर, स्वप्नावस्थाध्यान विधि आपको बताने का हेतु एक ही है कि आपकी सजगता और बढ़ जाए। आपका चेतन मन ज्यादा से ज्यादा जाग्रत रहे और अचेतन तथा अर्धचेतन और बड़ा ना होता जाए। और धीरे धीरे शून्य हो जाए।

एक अन्य सूचना पर विशेष ध्यान देना है। स्वप्नावस्था ध्यान के पहले, मैंने जाग्रतावस्थाध्यान विधि बताई है। उस ध्यान में से गुजरने के बाद यदि आप इस ध्यान में उतरेंगे तो आपको शीघ्र मदद मिलेगी।

जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति तीनों अवस्थाओं पर भी एक साथ उनके समय समय पर साधना कर सकते हैं। जागते हो तब जाग्रतावस्था की प्रत्येक अवस्था पर ध्यान करो। इससे एक तरफ से मन का शुद्धिकरण होता जाएगा। शुद्धिकरण की विधि में से गुजर रहे मन के पास, कम अशुद्धियाँ इकट्ठी होंगी।

परम जाग्रति के अभ्यास की वजह से अचेतन में भी अतिपूराने संस्कारों के सिवाय कोई खास कचरा या वासनाएं इकट्ठी नहीं होंगी। इसकी वजह से वैसे भी स्वप्न कम हो जाएँगे। सोते वक्त स्वप्नावस्थाध्यान पर केन्द्रित करो आपकी चेतना को। तब दिन में हुए अभ्यास का त्वरित लाभ मिल जाएगा। और आप जल्दी ही पा लोगे अधिकार अपने स्वप्नों पर।

स्वप्नावस्थाध्यान विधि बताने के प्रमुख दो कारण हैं। एक तो अचेतन मन और अर्धचेतन मन का शुद्धिकरण हो जाए और दूसरा यह है कि कुछ लोग स्वप्न में घबरा जाते हैं, कुछ लोग स्वप्न पर बहुत सोचते हैं, कुछ लोग दिन भर छोटी छोटी बातों की चिंता लेकर उसपर सोच सोचकर स्वप्न की घटना घटाते हैं। और कुछ लोग घटती हुई घटनाओं को स्वप्न की शुभाशुभ असर मानकर जोड़ते जाते हैं बातों को और सुख-दुःख के लिए प्रेरित होते हैं।

मैं आपको संशय, शंका, भ्रम और दुःख के जगत से बाहर ले जाना चाहती हूँ।

ध्यान और साधारण मनुष्य में फर्क होना चाहिए। एक बार आप ध्यान के विश्व में प्रवेश करो तब मैं कहूँगी कि जागते या सोते किसी भी अवस्था में ध्यानी का मन तनावग्रस्त नहीं रहना चाहिए परंतु मैं समझती हूँ कि मानव आखिर मानव है। मानवीय कमजोरियों से ऊपर उठना इतना आसान भी नहीं है। फिर भी ध्यान आपकी मदद कर सकता है।

जाग्रतावस्थाध्यान जैसे दिन में बढ़ते हुए तनाव से मुक्ति है तो स्वप्नावस्थाध्यान स्वप्न में पैदा होते तनाव से मुक्त होने का उपाय है।

एक बार आप ध्यान की कला सीख लेंगे फिर किसी तनावमुक्ति केन्द्र या तनावमुक्ति अभियान में जुड़ने की जरूरत नहीं रहेगी। अगर ध्यान में उतना नहीं सीखेंगे तो तनावमुक्ति अभियान में जाने के बाद भी तनावमुक्ति संदर्भ की कुछ बातें, कुछ संदर्भ, कुछ प्रयोग की व्याख्याएं एवं एक कल्पना इकट्ठी करके आएँगे। परंतु तनाव से मुक्त नहीं हो पाएँगे।

खैर, अब जरा विधि पर ध्यान दीजिए। स्वप्नावस्था में साक्षी रहने के दृढ़ संकल्प के साथ आप जब सोते हैं तब धीरे धीरे जाग्रत चेतना के अदृश्य होने के बाद अचेतन मन आपके आदेश का पालन करने लगेगा। आप अपने स्वप्न के आदेशकर्ता बन जाएँगे।

निद्रा के उतरने से शरीर की अचेतन अवस्था के कारण मनुष्य स्वप्नावस्था में जो कुछ भी घट रहा है उसे सच मान लेता है। चेतन मन वापस लौटते ही आंख खुल जाती है। बाहर की दुनिया का बोध होता है और अचानक पता चलता है कि जो कुछ भी देख रहा था वह झूठ था।

अगर आपने निद्रा में उतरते वक्त आदेश दे दिया है अपने अचेतन मन को, तो दिया हुआ आदेश और आपकी तीव्र धारणा की वजह

से दो बातें घटित होंगी। या तो स्वप्न अदृश्य हो जाएंगे। अथवा जो स्वप्नावस्था का आरंभ होगा भी, तो आप और स्वप्न दोनों की भिन्न भिन्न उपस्थिति रहेगी। आपके ही स्वप्न में आप साक्षी बन जाएंगे।

आप स्वतंत्र रहेंगे स्वप्न में। आप आपको देखते होंगे स्वप्न में फिर भी आपको बोध रहेगा कि स्वप्न में हूबहू आप जैसा ही दिखाई दे रहा है वह पात्र और आप दोनों अलग हैं। अथवा तो दोनों की भूमिका अलग है। तब ऐसा लगेगा कि जैसे आप ही देख रहे हो आपकी कोई फिल्म। सपना भी चलता रहेगा, आपकी भूमिका भी होगी, वहाँ चित्र विचित्र रूप में, और आप वहाँ सजग रहकर आप आपके हमशक्ल को प्रेक्षक की भांति देखते रहोगे।

फिर तो धीरे धीरे ऐसा भी हो सकता है कि आप धारणा के बल से स्वप्नों का सृजन भी कर सकते हो। जैसे खुली आंख से सपने की दुनियाँ बना लेते हो, वैसी ही बंद आंख से भी बन जाएगी। परंतु फिर वह स्वप्न नहीं रहेगा। वह स्वप्नावस्था की एक लीला बन जाएगी। जिन में आप आपके स्वप्न नाटक के नायक भी होंगे और दर्शक भी।

सामान्य मनुष्य तो ऐसा भी नहीं कर सकता। वह कितना अक्षम है! कितना असहाय और दया का पात्र है! कि उसके स्वप्न भी उसके हाथ में नहीं है। सत्य की बात तो बहुत दूर रही। वह बेचारा बन जाता है स्वप्न जगत में। मेरी दी हुई यह ध्यान विधि आपको इस बेचारेपन से मुक्त कर देगी।

परंतु ध्यान रहे, अगर आपके स्वप्न आपके काबू में आने लगे तो वहाँ रुकना मत। यह तो प्रारंभ है। जिस वृक्ष में पहले फूल आते हैं और उसी फूल से फल निष्पन्न होता है ऐसे वृक्ष के पूर्ण रूप से फलने तक प्रतीक्षा करनी चाहिए। फूल में ही मोहित होकर उसे तोड़ने लगेंगे तो फल कहाँ से आएगा! यह तो केवल प्रारंभ है, एक खेल है; रहस्योद्घाटन तो अभी बाकी है। वह रहस्य ही ज्ञान है, वह रहस्य ही सत्य है।

रात में मन चाहे स्वप्नों का सर्जन कर लेना वह एक जाग्रत चालबाजी है स्वप्नों के साथ अर्थात् अचेतन और अर्धचेतन मन के साथ। वह तो संकल्प बल की एक साधारण सफलता है, सफलता भी नहीं, एक मज़ा है। परंतु वहाँ अटकना मत। मैं स्पष्ट ना कह रही हूँ। क्योंकि यह तो मन की एक निम्न कोटि की साधारण सिद्धि है; अंतिम सिद्धि नहीं, उसमें कल्याण या मुक्ति नहीं है। जहाँ मुक्ति का अनुभव न हो ऐसी प्रत्येक सिद्धि बाधारूप है। मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति रात में अथवा शयन के दौरान पाँच से आठ स्वप्न देखते हैं। ऐसा क्यों होता है ?

मैं कहती हूँ कि स्वप्न एक मनोविरेचन की प्रक्रिया है। मन की अधूरी बातें जो आप जाग्रतावस्था में न किसी को कह सकते हो, न कर सकते हो; ऐसा सबकुछ स्वप्न के द्वारा पूरा होता है। यह मन का खाली होने का एक मार्ग है।

मैं कहती हूँ कि यह विधि एक बड़ी सुंदर विधि है। बड़ा प्यारा अनुभव किया है मैंने इस विधि के द्वारा। इस विधि के द्वारा आप मन के पार चले जाएंगे।

जबतक मन है तब तक मनोविज्ञान की जरूरत है। मन के पार जाने के बाद मन और मनोविज्ञान दोनों निरर्थक हो जाते हैं। इस विधि में पूर्ण रूप से डूबने के बाद आप रात्रि के दौरान चेतना के गहन स्तर पर सचेत होने पर स्वप्न मुक्ति के कारण परम शांति और गहरी नींद का अनुभव करेंगे।

आचार्य रजनीश ने कहा है कि निद्रा एक छोटी सी मृत्यु है। परंतु मेरी दृष्टि से यह बिल्कुल गलत है। किसी भी प्रकार के चिंतन से या तर्क से आप निद्रा की मृत्यु से बराबरी नहीं कर सकते।

निद्राधीन को जगाया जा सकता है, मुर्दे को जगाने का कोई उपाय नहीं है। निद्रा में शरीर के भीतर के सारे तंत्र क्रियान्वित होते हैं, मुर्दे के सारे तंत्र बंद पड़ जाते हैं। तो कैसे कहेंगे निद्रा को छोटी सी मृत्यु !

मैं कहूँगी कि निद्रा एक कुदरती माइल्ड एनेस्थीसिया है, जिससे मनुष्य का थका हुआ चेता तंत्र और मस्तिष्क कुछ घंटों तक आराम प्राप्त कर लेते हैं। कुछ घंटों के लिए दुनियादारी की पीड़ा से छूट जाते हैं। कुछ समय के बाद मनुष्य नई ताजगी और स्फूर्ति के साथ सुबह उठकर पुनः सक्रिय हो जाता है।

प्रिय साधको !

मेरी बताई हुई इस ध्यान विधि में सफल होने के बाद आप अन्य के स्वप्नों को सफल करने की सिद्धि तक पहुंच सकते हैं।

हनुमान का एक अनूठा पात्र है रामकथा में। हमारी पुराण कथाओं ने खास तत्व चिंतन, कहानियों के द्वारा दे दिया है। अगर कथाकार उसे समझापाए और श्रोता उसे पचाए तो। हनुमान एक योगी, ज्ञानी एवं ध्यानी भक्त थे। वे कुछ खास सिद्धियों के साथ अवतरित हुए पुरुष थे, उनके जीवन में भी गर्भाव क्रांति घट चुकी थी, योग उन्हें रक्त में मिला था। क्योंकि हनुमान की माता अंजना एक योगिनी और तपस्विनी

थी। तो कुछ क्षमताएं गर्भ से ही प्राप्त होना स्वाभाविक था उसके लिए।

स्वप्न के संदर्भ में एक प्यारी घटना घटी है हनुमान के साथ। वे जब लंका में जाते हैं सीताजी की खोज में। तब वहाँ त्रिजटा के स्वप्न की बात सनते हैं। त्रिजटा सीता से कहती है कि आज मुझे स्वप्न में एक वानर आया। उसने लंका जलाई! राक्षसों का वध किया और रावण की बीस भुजा और दस मस्तकों को मैंने खंडित होते हुए देखे! त्रिजटा एक पवित्र हृदय वाली औरत थी। योगी हनुमान समझ गए इस बात को कि यह स्वप्न भविष्य में होने वाली घटना के प्रति इशारा है। यह एक नियति है। तो यह स्वप्न जल्द ही पूरा हो जाना चाहिए। मेरे द्वारा नहीं तो किसी और के द्वारा, परंतु ये होगा जरूर। क्योंकि यह नियति है।

वैसे तो हनुमान तो केवल सीता का संदेश लेने के लिए ही आए थे। परंतु फिर घटनाएं बदलने लगीं। त्रिजटा का स्वप्न पुरा हुआ हनुमान की केन्द्रवर्ती भूमिका के साथ। परंतु एक असाधारण व्यक्ति ही ऐसा कर सकता है।

ऐसे तो इतिहास में अनेक उदाहरण हैं। ऐसी घटनाएं बुद्ध के साथ, राम के साथ, महावीर के साथ भी घटी हैं। परंतु बड़ा प्रचलित उदाहरण इसलिए दिया कि आप आसानी से समझ सकें मेरी बात को।

प्यारे साधको!

तो अब उतरो विधि में अगर आपको जरूरत लग रही है इस विधि की तो। निद्रा बोध होते ही तीव्र धारणा करो और आदेश दो स्वयं को कि अगर स्वप्न आया तो मैं और मेरे स्वप्न अलग अलग रहेंगे। आप बिलकुल सभान रहेंगे अपने स्वप्न के प्रति। स्वप्नावस्था में दृष्टा रहने का अभ्यास दृढ़ होते ही स्वप्नशून्यता घटेगी।

मन के शुद्ध हो जाने के कारण वासना शून्यता और वासना शून्यता से धीरे धीरे मनोशून्यता घटती है। इस बात को खास याद रखना। आपका दृढ़ संकल्प एकसाथ दो काम करेगा। एक ओर सूक्ष्म रूप से मन का शुद्धिकरण होता जाएगा। दूसरी ओर स्वप्न में भी दृष्टा भाव को बनाए रखने के गहन अभ्यास से अपने आप वासना शून्यता भी घटती जाएगी।

एक बार मनोशून्यता की अवस्था प्राप्त होते ही महाशून्य में प्रवेश हो जाएगा। वही सच्चा निर्वाण है सच्चा मोक्ष है।

## धरणा - ३८

### निद्रावस्था ध्यान

प्रिय भक्तो!

निद्रा एक कुदरती देन है। वह परमात्मा की ओर से मनुष्य को मिला हुआ बहुमूल्य उपहार है। आप चाहें तो आप निद्रा को भी ध्यान बना सकते हैं। आप चाहें तब निद्रा में उतर सकते हो, जब चाहें तब निद्रा में से जाग सकते हो।

मनुष्य के भीतर परमात्मा ने एक ओटोसिस्टम इन्स्टॉल की है। परंतु मनुष्य उस सिस्टम के प्रति बिलकुल सजग नहीं है। इसलिए उसे नींद में से जागने के लिए बाहर के एलार्म की घंटी का उपयोग करना पड़ता है। मेरे अनुभव है कि प्रत्येक मनुष्य के भीतर सोने और जागने की जब अनिवार्य आवश्यकता होती है तब वह एलार्म बजने लगता है। परंतु भोगवाद में डूबा मनुष्य और अजाग्रत अवस्था में जीता हुआ मनुष्य इतना बहरा हो गया है अपनी चेतना के सूक्ष्म अनुभव के प्रति कि वह उस अलार्म को नहीं सुन सकता। और कभी कभी सुन लेने के बाद भी उसके प्रति ध्यान नहीं देता।

शरीर और चित्त के थक जाने के साथ ही जब भीतर की घड़ी को लगता है कि अब उसे आराम की जरूरत है तब वह घंटी बजने लगती है। वह घंटी दिखाई देती है मनुष्य के हाव भाव से। जैसे कि आंखें खिंचने लगती हैं, पलकें बंद होने लगती हैं, आदमी उबासियां लेने लगते हैं इत्यादि। ऐसे ही जागने के वक्त पर भीतर की वह घड़ी बजती है। परंतु मनुष्य उसके प्रति ध्यान नहीं देता।

कुछ प्रमादी और आलसी किस्म के लोग स्थूल घंटी को भी जो बार बार बंद कर देते हैं तो ऐसे लोगों के साथ बेचारी सूक्ष्म घंटी क्या कर सकती है? वह तो आवाज भी नहीं करती। परमात्मा मनुष्य के भीतरी सभी तंत्रों में एक गहन शांति के साथ कार्यरत रहते हैं परंतु लड़ना, चिल्लाना और हंगामे को ही जानने वाला आदमी उस शांत पुकार को नहीं सुन सकता। मैं फिर से एक बार आपको उन सारी अनुभूतियों की ओर ले जाना चाहती हूँ ध्यान के द्वारा।



प्रिय साधको !

अब मैं आपको निद्रा के संदर्भ में भी एक मौलिक विधि बताने जा रही हूँ। जिसे मैंने निद्रावस्था ध्यान नाम दिया है। आपको होगा कि निद्रा में कौन ध्यान करेगा ? कैसे कर पाएगा ? साधक अगर ध्यान करेगा तो सोएगा कौन ? आराम कैसे मिलेगा ?

प्रिय साधको !

निद्रा में आप ही ध्यान करोगे। आपका शरीर, आपका मस्तिष्क सो जाएगा नींद में। वे आराम प्राप्त कर लेंगे नींद के द्वारा।

हम सब जानते हैं कि हमारी परम चेतना तो एक जाग्रत प्रहरी की तरह जीवन भर चौबीसो घंटों हमारे भीतर जागती रहती है।

हाँ, जाग्रतावस्था में वह इन्द्रिय द्वारों से बाहर की ओर झाँकती है तब हमें बाहर की दुनियाँ का पता रहता है। निद्रावस्था में वह भीतर साक्षी बनी रहती है। पूर्ण अंतरमुखी हो जाती है वह चेतना निद्रा में और हृदय में स्पंदित होती रहती है। हर नाड़ी में रक्त प्रवाह के रूप में घूमती रहती है। परंतु बाहर ज्यादा क्रियाशील नहीं दिखाई देती। क्योंकि अखियों के झरोखे बंद हैं। हाथ पैर रूपा शरीररथ के पहिए स्थिर हैं।

मान लो कि आप घर के भीतर हैं और सारे द्वार तथा खिड़कियाँ बंद हैं; स्वाभाविक है कि आपका क्षेत्र भी सीमित हो जाएगा। भीतर बैठे बैठे आप अपनी भूमिका निभाते रहेंगे, आप सांस भी लेते रहेंगे जब तक बाहर आने के लिए द्वार न खुले।

जब अंधकार कमरे की सारी चीजों को ढांक देता है तब कमरे की चीजें नहीं दिखाई देतीं। परंतु सबकुछ ढांक देने वाला अंधकार जरूर दिखाई देता है। वैसे ही अगर शास्त्र की भाषा में कहूँ तो मनुष्य के तमोगुण के पूर्ण विकसित होने से निद्रा आ जाती है और सबकुछ ढंक जाता है, आँखें बंद हो जाती हैं, मनुष्य कुछ घंटों के लिए अंधकार में चला जाता है। और जिन्दा होते हुए भी एक प्रकार की मूर्छा का अनुभव करता है फिर भी वह पूर्ण मूर्छित नहीं है।

पतंजलि ने मन की पांच वृत्तियाँ बताई हैं – प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति। मैं कहना यह चाहती हूँ कि निद्रा एक वृत्ति है। आपको प्रश्न उठ सकता है कि वृत्ति क्या है ?

मैं सरल शब्दों में कह सकती हूँ कि वह एक मनुष्य के मन पर पड़ी बहुत पुरानी छाप है। जिसके संस्कार हो, जिसका असर हो, जिस असर में क्रिया घटती हो और जिसकी स्मृति रहती हो ये है वृत्ति।

किसी भी वृत्ति मनुष्य में उत्पन्न होने का कारण है पुराने संस्कार, पुरानी छाप है उसके मन पर, उस संस्कारों की। जो उसे रक्त में से मिले हैं। वह छाप जब अपने आप उभरने लगती है तब उसका असर दिखाई देता है मनुष्य के वाणी, वर्तन और विचार में। उन संस्कारों के अनुसार मनुष्य क्रिया करता है। और मनुष्य को वे संस्कार और संस्कारों के द्वारा भीतर और बाहर घटित हुई क्रियाएं याद भी रहती हैं।

मैं कहूँगी कि निद्रा एक वृत्ति के साथ एक क्रिया भी है। वह अन्य वृत्तियों की तरह कोई दबी हुई वृत्ति नहीं है। यह तो रोज-ब-रोज स्पष्ट दिखाई देती वृत्ति है। आपकी हरेक वृत्तियों को हरेक आदमी नहीं देख सकता, नहीं समझ सकता। परंतु निद्रा एक ऐसी सहज सामान्य वृत्ति है मनुष्य की कि वह अति स्वाभाविक, अनिवार्य, सहज स्वीकृत और सभ्यता के खिलाफ नहीं है।

निद्रा वृत्ति के कारण शरीर के साथ जो क्रिया घटती है वह है सोने की प्रक्रिया। उसे मैं मनुष्य के निद्राधीन होने की क्रिया कहूँगी। क्योंकि नींद का एहसास होते ही मनुष्य को उसके आधीन हो जाना पड़ता है। वह विवश हो जाता है सोने के लिए।

ये क्रिया अक्रिया में घटती हुई एक क्रिया है। अर्धबेहोश स्थिति में घटती हुई एक कुदरती प्रक्रिया है। क्रिया इसलिए कह रही हूँ कि निद्रा का मनुष्य के जीवन पर गहरा असर आता है। और उस असर का सुबह स्मरण भी रहता है। वह असर मनुष्य की स्मृति में स्थान ले लेता है। निद्रा को मन की वृत्ति इसलिए कही है कि इस वृत्ति से अर्थात् निद्रा पूरी होने से मन पुष्ट होता है।

आपने इतिहास पुराण पढ़ा हो तो पता होगा कि जो जो योगी मन के पार चले गए उसकी निद्रा भी चली गई जैसे योगी भरत, योगी लक्ष्मण, गौतम बुद्ध, आचार्य शंकर। शंकर ने तो उस हद तक कहा कि “निद्रा समाधिस्थिति”।

आद्य शंकराचार्य ने अपने आध्यात्मिक ऊंचाई के सर्वोत्तम शिखरों को छू लेने के बाद कह दिया कि हे प्रभु! मेरा बोलना तेरी स्तुति है, मेरे प्रत्येक कर्म तेरी पूजा है, मेरा चलना फिरना तेरी प्रदक्षिणा है..... और मेरी निद्रा समाधि है। आद्य शंकराचार्य के लिए निद्रा समाधि बन गई थी परंतु लोग उसकी समाधि को निद्रा समझते थे।

मैंने ऐसे योगियों को देखा है, मैंने बचपन में ऐसे सिद्ध पुरुषों की सेवा की है कि उन्हीं को मैंने कभी सोते हुए पाए ही नहीं। मुझे लगता था कि वे सोए हैं, परंतु वे सदंतर जाग्रति में होते थे। आवश्यकता पड़ने पर कभी कभी बहुत धीरे से उन्हें पुकार लेते थे तो तुरंत जवाब मिलता था। फिर मुझे पता चल गया कि वे सिर्फ शरीर को आराम देते थे। अचेतन जैसे नहीं हो जाते थे किसी सामान्य निद्राधीन मनुष्य की भांति। उनका तार सदा जुड़ा रहता था अदृष्ट के साथ। वे समाधि ही थी, परंतु उनके आश्रम के लोगों में समझ न होने के कारण वे बोलते थे कि

महात्मा सो गए हैं, उन्हें जगाना मत और मैंने पहचान लिया था कि जो जागे हुए ही हैं वह निद्रा में कैसे हो सकते हैं!

आध्यात्मिक सर्जक अकसर समाधि के करीब होते हैं। वे निद्राधीन नहीं होते, समाधिस्थ होते हैं। उनकी समाधि सबीज होती है।

अब फिर से आईए एक बार निद्रा ध्यान की ओर। आपको होगा कि क्या होगा निद्रा पर ध्यान करने से ?

प्रिय साधको !

आज तक आप पर निद्रा ने राज कर लिया, निद्रा अधिकार जमाती रही है आपके तन मन पर। परन्तु निद्रा ध्यान से आपका अधिकार निद्रा पर हो जाएगा।

मनुष्य कितने घंटे सोता है यह महत्वपूर्ण नहीं है। महत्व इस बात का है कि निद्रा में कितनी शांति का अनुभव करता है। महत्व इस बात का है कि शयनाधीन मनुष्य कितना स्वप्न मुक्त रह सकता है। महत्व इस बात का है कि निद्रा में से जागने के बाद कितनी स्फूर्ति और ताजगी का अनुभव होता है मनुष्य के शरीर और मस्तिष्क को।

वाल्मीकि एवं वेद व्यास जैसे सर्जक बहुत कम सोए हैं उनकी जिन्दगी में। फिर भी अपार ऊर्जा प्राप्त कर लेते थे बहुत कम निद्रा से भी। और कुछ लोग पंद्रह घंटे सोने के बाद भी आलस और प्रमाद से भरे रहते हैं। ऐसा क्यों होता है ? क्योंकि ऐसे लोगों के लिए निद्रा भी भोजन है। ऐसे लोग भोजन की भांति नींद को भी खाए जाते हैं। उसका स्वाद नहीं ले सकते हैं। ऐसी निद्रा से मात्र प्रमाद बढ़ता है। उन्हें बोध नहीं है कि मुझे कितनी और कैसी निद्रा की जरूरत है।

श्रीकृष्ण कोई पागल नहीं थे कि जिसने गीता में योगियों के लिए कुछ सूचन दे दी। “अति जागने वाला, अति सोने वाला, अति खाने वाला, अति भूखा रहने वाला, अति चुप रहने वाला, अति बोलने वाला सत्य को प्राप्त नहीं कर सकता है।”

एक मनुष्य निद्रा का भोग करने वाला होता है, दूसरा मनुष्य निद्रा को एक विधि की तरह लेता है। संस्कृत का विधि शब्द अत्यंत वैज्ञानिक एवं ज्यादातर आध्यात्मिक है। सामान्य मनुष्य तो निद्रा का उपभोग ही करते हैं परन्तु जो मनुष्य निद्रा विधि के रूप में उपयोग में लेता है, निद्रा उसके वश में हो जाती है।

इतना ही नहीं परन्तु उसकी निद्रा प्रगाढ़ शांति एवं अत्यंत ताजगी देने वाली तथा पूर्ण होती है। आप कहेंगे कि निद्रा में पूर्ण और अपूर्ण क्या ? कभी चार ही घंटा सोने को मिला तो आदमी कहता है कि आज मेरी नींद पूरी नहीं हुई, अधूरी रह गई परन्तु मैं इस पूर्णता-अपूर्णता की बात नहीं कर रही हूँ। आप जब सोकर जागो तब आपको स्मृति हो कि मैं सुख से सोया, मेरा मन प्रसन्न है, मैं फ्रैश हूँ, मेरा हृदय प्रफुल्लित है – उस असर को, उस अनुभूति को मैं पूर्ण निद्रा कहती हूँ। फिर भले वह एक घंटे की हो या दस घंटे की। और जब आप दस घंटे सोने के बाद भी अहसास करो कि मेरा मन अस्थिर है, शरीर टूट रहा है, कोई फुर्ति या आनंद का अनुभव नहीं हो रहा है, थकान उतरी नहीं है, चित्त अस्वस्थ है और शरीर भारी है तो समझना कि यह अपूर्ण नींद है।

मैं आपको जो ध्यान विधि दे रही हूँ वह आपको पूर्ण निद्रा का अनुभव कराएगी। कुछ लोगों को अनिद्रा का रोग हो जाता है। अति मनोसंघर्ष कोई गंभीर बीमारी अथवा शारीरिक रासायनों के परिवर्तन के कारण ऐसी स्थिति आ सकती है। ऐसे लोगों के लिए भी यह ध्यान विधि अत्यंत उपयोगी है। हाँ, याद रखना, ध्यान रोगों को मिटाने के लिए नहीं है। ध्यान और योग मनुष्य को आध्यात्मिक रूप से जगाने के लिए हैं। परन्तु कुछ ध्यान विधियों से आपके भीतरी रसायन बदल जाते हैं। अगर किसी ध्यान विधि से आपके रोग को सहज मदद मिल गई तो बहुत अच्छा, परन्तु आज कुछ धंधादारी लोगों ने जैसे योग और रोग के अनुप्रास को जोड़ दिया है वैसे ध्यान और रोग को जोड़ने की मूढ़ता नहीं करना। ध्यान मनुष्य के अज्ञान रोग को मिटाता है।

प्यारे साधको !

यह विधि आपको सम्यक निद्रा प्रदान कर सकती है। स्वयं को गाढ़ निद्रा में ले जाने की तीव्र धारणा से शुद्ध निद्रा की प्राप्ति हो सकती है। शरीर को स्वस्थता एवं मन को प्रसन्नता प्राप्त होती है। मेरे अनुभवों में से प्रगटी हुई यह विधि मन की ही शक्ति के द्वारा मन की निद्रा वृत्ति को अनुशासित करने का एक सजग प्रयोग है।

प्रिय साधको !

अब जरा ध्यान से समझ लो विधि को जब निद्रा वृत्ति जाग्रत हो अर्थात् आपका शरीर और मस्तिष्क जब नींद का अहसास करने लगे तब शयन में जाने के पहले मन को सूचना दो कि रजोगुण और सत्वगुण आपको विक्षिप्त न करें।

प्यारे साधको !

अब थोड़ा एक विशेष बात की ओर ध्यान दो। आजतक आपने आपकी जिन्दगी में ज्यादातर साधु संतों के पास से सत्वगुण के गुणगान ही सुने हैं, सब सत्वगुण का ही मंडन करते हैं। सब सत्वगुण को विकसित करने के लिए ही उपदेश देते हैं। फिर तो चिलाचालू बाबा लोग भी उसी स्वर में अपनी आलापी मिलाते जाते हैं। और तमोगुण की निंदा करते रहते हैं। आप जहाँ जाएंगे वहाँ सब एक ही उपदेश देंगे। राजसी गुण और तमोगुण से मुक्त हो जाओ। आप भी घबराए हुए हो। क्योंकि ऐसा कर सकते नहीं हो, तब आपको अपराध भाव का अनुभव होता है। उस अपराध भाव के कारण आप उपदेशक को महान समझते रहते हो और स्वयं को हीन।

परंतु याद रखें, अगर आप ऐसी हीनता ग्रंथि से पीड़ित हो तो अभी से मुक्त हो जाओ। केवल पेट भरने के लिए या धर्मगुरु बनने के शौक से अथवा गुरु की गादी संभालने की बारी आ गई है तो उपदेश देना भी सीखना पड़ेगा, ऐसे लोगों के पास ना आध्यात्मिक चित्त होता है, न कोई अनुभूतियाँ होती हैं, ना ही कोई वैज्ञानिक तथ्यों की जानकारी होती है, ना तो शास्त्र का सही अर्थ समझने की क्षमता। वे तो परंपरा से सुनी हुई पुरानी पट्टी पढ़ रहे हैं आपके सामने और आप गंवार की भांति उनके चरणों में बैठकर सबकुछ स्वीकार करते रहते हो।

लेकिन अब जागो। धर्म के नाम से मनुष्य के मन पर निरर्थक उपदेश थोप थोप कर बहुत अत्याचार हो चुका, अब रोक दो स्वयं पर होते हुए धार्मिक अत्याचार को। या स्वयं विकसित होना सीखो। या आत्मप्रतिष्ठित संत को ढूँढो। आपके कानों को और मन को बासी व रसकसहीन भोजन देना बंद करो, बीमार हो जाओगे।

मैं कहती हूँ कि तीनों गुणों की आवश्यकता है। मनुष्य की प्रकृति को त्रिगुणात्मक कहा है। आपका मनोदेहिक ढाँचे का अस्तित्व ही तीनों गुणों के संतुलन के कारण है। सत्वगुण, रजोगुण और तमोगुण तीनों गुण अनिवार्य हैं आपके भौतिक अस्तित्व के लिए। तमोगुण को अशुद्ध मत मानो, वह आपने सुनी हुई बात है सत्य कुछ और है। तथाकथित साधु संतों से तमोगुण की निंदा सुनकर भ्रमित मत होओ। तीनों गुणों का वैज्ञानिक महत्व समझने के बाद ही उस विषय में निवेदन देना चाहिए।

इतना तो सोचो! कि हमारे ऋषियों ने सत्व, रजस और तमस; तीनों को गुण कहा है। यहाँ सदगुण या दुर्गुण की बात नहीं है। यहाँ संस्कृत शब्द गुण का अर्थ प्राकृतिक स्वभाव के संदर्भ में लेना है। पूरी सृष्टि त्रिगुणात्मक है। तीनों गुण एक दूसरे के परिपूरक हैं।

अपने आंतरिक रसायनों के और मन के भावों के हजारों हजारों वर्ष तक अभ्यास करने के बाद उस रसायन के कार्य क्षेत्र और प्रभाव के रहस्य को जानकर हमारे मनीषियों ने उन्हें गुण नाम दिया है।

अब ध्यान से जान लीजिए तीनों गुणों के कार्यक्षेत्र को। सत्वगुण मनुष्य को क्रियाधर्म में प्रवेश कराता है। सजग मनुष्य की क्रिया कर्मयोग बन जाती है। परंतु सत्वगुण के अभाव में क्रिया संभव नहीं है। क्रिया से सृजन होता है, सृजनात्मकता और क्रियाशीलता सत्वगुण के कारण संभव होती है।

दूसरी बात रजोगुण मनुष्य को स्वप्न वृत्ति में प्रवृत्त करता है। कल्पना, योजनाएं इत्यादि रजोगुण के कारण संभव हो सकते हैं।

और अब विशेष ध्यान दीजिए तमोगुण की ओर; तमोगुण निद्रा का कारण है। तमोगुण के अभाव में निद्रा असंभव हो जाएगी। अनिद्रा एक बात है और निद्रा के पार जाना दूसरी बात है। निद्राविहीनता और निद्रामुक्ति इन दोनों को ध्यान से समझ लेना चाहिए।

जो सिद्ध पुरुष निद्रा के पार चले जाते हैं उन लोगों की बात अलग है परंतु अगर आपके तथाकथित साधु-संतों के अनुसार सबका तमोगुण नष्ट हो गया तो लोग निद्राहीन हो जाएंगे। एक धनहीन दरिद्र से भी उसकी हालात ज्यादा खराब हो जाएगी। निद्रा के अभाव में पूरी दुनिया एक बड़ा पागलखाना हो जाएगी। अब आप ही कहो कि तमोगुण की आवश्यकता है कि नहीं?

कुछ साधु-बाबा निद्रा की भी निंदा करते हैं। मैंने कुछ संप्रदायों में देखा है कि उनकी परंपरा में दीक्षित शिष्यों को सुबह चार बजे उठना पड़ता है। फिर ठंडे पानी से फरजियात स्नान भी करना पड़ता है। यह भी एक प्रकार का शारीरिक दमन है। गुरु की ओर से हो रहा चेलों पर अत्यचार है।

ठंडे या गर्म पानी से स्नान करना यह एक व्यक्तिगत बाबत है। आपका शरीर जिसमें सहमत होता है ऐसा करो। ठंडे पानी से नहाने वाला धार्मिक और गर्म से नहाने वाला अधार्मिक.. ऐसा नहीं है।

मैं कहती हूँ कि शरीर को त्रास देना यह अधर्म है। कच्ची नींद से किसी को जगाने में कोई बुद्धिमत्ता नहीं है। बुद्धिमत्ता इसमें है कि अपनी नींद को अपने अनुशासन में ले लो। विशुद्ध निद्रा प्राप्त करो। ब्रह्ममुहूर्त में जगने के स्थान पर भीतर के ब्रह्म को जगाओ।

बूढ़े लोगों की निद्रा कम हो जाती है। ऐसे लोग कम सोने के नियम, घर के जवान सदस्यों पर भी थोप देते हैं, वह अज्ञान है। व्यक्तिगत मान्यता धर्म नहीं बन सकती। धर्म तो सर्वरक्षक और सर्वपोषक है।

विज्ञान ने आहार और निद्रा के कुछ मापदंड बनाए हैं। परंतु ध्यान का विज्ञान सबसे अलग है। ध्यान कुछ भी नापतोल के करने में नहीं मानता। वह आंतरिक परितृप्ति में आस्था रखता है। सामाजिक, धार्मिक और वैज्ञानिक मापदंड आम जनता के लिए लागू हो सकते हैं



जिसके पास अपनी कोई दृष्टि नहीं है। जो भेड़िया धसान में चलने वाले हैं, एक चरवाहे के पीछे पूरा समूह चलता है। परंतु ऐसे कोई मापदंड अध्यात्मिक पुरुष के लिए लागू नहीं हो सकते हैं।

विज्ञान कहता है कि खुराक में प्रोटीन, विटामिन, मिनिरल्स, कार्बोहाइड्रेट, फेट और वॉटर ये छः तत्व अनिवार्य हैं। परंतु हमारे ऋषि मुनि केवल कंद फल पर जीते थे। और आज के मनुष्य से उनका स्वास्थ्य ज्यादा अच्छा और आयु लंबी थी।

शरीर की रचना ही ऐसी है कि वह उसे जिसकी जरूरत है उस तत्व को अन्य तत्वों में से रूपांतरित कर लेता है अपनी खास शक्तियों के द्वारा। परंतु इसके लिए शरीर का स्वस्थ होना जरूरी है। स्वस्थ शरीर के लिए स्वस्थ मन की आवश्यकता है। और स्वस्थ मन और देह के लिए सम्यक निद्रा की आवश्यकता है। एक अर्थ में सब एक दूसरे के परिपूरक हैं।

दूसरा भी एक परम सत्य याद रहे कि सबके जीवन का हिसाब-किताब एक जैसा नहीं हो सकता। तो अब आपने जान लिया है कि निद्रा निंदनीय नहीं है। हरेक मनुष्य का ढांचा अलग अलग होता है। उसके हिसाब से उसे नींद चाहिए। विज्ञान भले कहे कि मनुष्य को कम से कम आठ घंटा नींद चाहिए परंतु मैं एक बार फिर से कहूंगी कि नींद को घंटों में नहीं गिनकर उसकी गहराई और शांति की मात्रा में गिनना चाहिए।

निद्रा प्रेम जैसी है; वह भले कुछ क्षणों के लिए परंतु समग्रता से मिले तो परितृप्ति का अनुभव होता है। ऐसे ही भले कम घंटों की परंतु शांत और प्रगाढ़ निद्रा प्राप्त हो, तो प्रसन्नता, ताजगी एवं नए नए कार्यों को करने का उत्साह और ऊर्जा प्राप्त होती है।

आप ऐसी निद्रा प्राप्त कर सको इसलिए मैंने इस ध्यान विधि के साथ साथ अन्य बहुत सारी बातें बताई हैं।

जब आपको नींद आ रही है, ऐसा एहसास करो तब तुरंत आत्मबोध को जगा लो। अर्थात् आप नहीं सो रहे हो परंतु आप निद्रा के द्वारा आपके शरीर, मन और मस्तिष्क को आराम दे रहे हो।

यहाँ मैं आपका अर्थ कर रही हूँ परिशुद्ध परमात्मा। बिस्तर में जाते वक्त और निद्रा में उतरने के पहले आपके भीतर साक्षीबोध जगाए रखो। ताकि शरीर और दिमाग भले सो जाए परंतु निद्रा से जड़ता न बढे। तमोगुण के साथ काम लेने की यह एक आध्यात्मिक विधि है। यह बोध आपकी निद्रा को समाधि भी बना सकता है। यह बोध निद्रा पर अनुशासन कर सकता है। यह बोध आपको बेसुध नहीं परंतु शुद्ध निद्रा को आपके आधीन करके स्फूर्ति और शांति दे सकता है।

इस विधि से गुजरने के कारण आप एक चलती-फिरती, सोती-जागती चेतना मात्र रह जाएंगे। मन की मूढता अदृश्य हो जाएगी। कर्ता और कर्ता भाव दोनों अदृश्य हो जाएंगे। वही भगवद्ता के क्षण हैं। वही प्रभु का प्रागट्य है। वही आपके भीतर चैतन्य की अनुभूति करने का परम अनुभव है और वही है, आत्मराम का साक्षात्कार।

## धरणा - ३९

# तूर्यावस्था ध्यान

प्रिय साधको!

शिव शब्द एक अद्भुत और असाधारण शब्द है। इतने गूढ़ार्थपूर्ण, सुंदर, प्यारे और संक्षिप्त शब्द केवल भारत के पास ही हैं। जैसे कि प्रेम, ध्यान, आनंद ये सारे शब्द अद्वितीय हैं। ऐसे शब्द विश्व को भारत ही दे सकता है। तूर्या अवस्था में जीव और शिव का भेद मिट जाता है।

यह शिवत्व प्रत्येक मनुष्य में है। माया के आवरण और कर्ता भाव की वजह से वह ढंका हुआ है। शिवत्व का अर्थ है साक्षात् कल्याण की अवस्था। बहुत कम लोग अपनी इस अवस्था का अनुभव कर सकते हैं। और जिन्होंने अपनी इस अवस्था का अनुभव कर लिया ऐसी आत्मा फिर विभूति बन जाती है। समाज के लिए भगवान बन जाती है। पतंजलि को लोग भगवान पतंजलि, वेद व्यास को भगवान वेद व्यास और आचार्य शंकर को तो समाज ने स्वयं शिव का अवतार मान लिया। बुद्ध और महावीर को भगवान का पद दे दिया।

भगवान कोई वस्तु या व्यक्ति का नाम नहीं है। वह एक विशेषण है, पहुंचे हुए मनुष्य का। चेतना की विशिष्ट अवस्था के लिए यह शब्द प्रयोग होता है। अगर आपकी ऐसी अवस्था है तो आप भी भगवान हैं।

मैं तो कहूंगी कि जिसका भगवद्ता में प्रवेश हो गया, कल्याण भाव में प्रवेश हो गया, वह बन गया भगवान। और इसके पहले भी उसमें भगवान ही थे। क्योंकि आज नहीं तो कल आपको वहाँ तक पहुंचना ही है। भले कुछ जन्मों के बाद पहुँचो परंतु प्रत्येक मनुष्य की आत्यंतिक संभावना तो वही है।

वह भगवद्ता कहीं बाहर से नहीं आएगी। वही आपका असल स्वरूप है। ध्यान, सत्संग, जाग्रति और साधना के द्वारा आपको केवल उसपर छाए हुए आवरणों को दूर करना है। निरर्थक आवरणों के हटते ही आपके भगवान आपको दिखाई देने लगेंगे। जो लोग दूसरों को भगवान के दर्शन कराने की फिराक में हैं वे ढोंगी हैं। यहाँ मैं भगवान की मूर्ति के दर्शन की बात नहीं करती हूँ। धन कमाने के लिए कुछ चालाक लोग मिट्टी के अबोध पुतले को कभी कभी भगवान बना देते हैं। दूसरे को भ्रम में डालते हैं।

मैं कहती हूँ कि जब आपको आपके भीतर भगवान दिखाई देंगे तब दूसरों में भी दिखने लगेंगे। परंतु भीतर के भगवान जब तक कूड़े करकट से दूषित, मन की मैली चादरों से ढंके हुए हैं तब तक दूसरे में भी आपको कचरा ही दिखाई देगा। मनुष्य में जब बोध जागता है तब उसमें भगवान दृश्यमान होने लगते हैं। आपके भीतर के भगवान जब प्रगट हो जाएंगे तब आपको एक ऐसी क्षमता प्राप्त होगी कि दूसरों में छिपे हुए भगवान के भी आप दर्शन कर पाएंगे। फिर वह भगवान भले कितने भी आवरणों से ढंके हुए क्यों न हो!

भगवान बुद्ध आम्रपाली वैश्या के घर भोजन करने को गए थे। क्यों? इसी वजह से। इसी वजह से तो राम ने गिधपक्षी को अपनी गोदी में उठाया था। दुनिया के लोगों को गिधपक्षी में मांसाहारी पक्षी मात्र दिखाई देता है। परंतु राम ने अपने भीतर के भगवान को पा लिया था।

बुद्ध ने ध्यान के द्वारा पहले स्वयं के परमात्मा का दर्शन कर लिया फिर नई दृष्टि प्राप्त हो गई। दुनिया को आम्रपाली में वैश्या नजर आती थी, बुद्ध ने उसमें भी परमात्मा को देखा। संत ज्ञानेश्वर को भेंसे में भी भगवान के दर्शन हो गए।

खैर, कहने का तात्पर्य इतना ही है कि शिवत्व की प्रत्यभिज्ञा (पहचान-परिचय) हो जाने के बाद पूरे विश्व में व्याप्त परमात्मा का दर्शन करना आसान हो जाता है। और यह शिवत्व की अवस्था ही तूयावस्था है। जिसे योगीजन चौथी अवस्था कहते हैं। ध्यानी समाधि कहता है। और वेद तूयावस्था कहता है।

तूयाभाव ध्यान विधि और नाम दोनों का आविष्कार मेरे द्वारा हुआ, फिर भी मैं कहूँगी कि ये कोई ध्यान विधि नहीं है, यह तो ध्यान का परिणाम है। ध्यान की परम सीमा में जो फलित होती है वह भावदशा है। वह अवस्था सभी भावों से मुक्त फिर भी भावपूर्ण है। वहाँ केवल एक ही भाव रहता है और वह है शिव भाव। अर्थात् “मैं शिव हूँ”। इस ध्यानावस्था में साधक के शरीर की उपस्थिति होते हुए भी साधक अदृश्य रहता है। और केवल शिवत्व की हाजरी रहती है। साधक अपने नाम और रूप का विस्मरण करके केवल इतनी ही बोध दशा में रहता है कि मैं शिव हूँ। शिव का अर्थ यहाँ चित्रों में देखे हुए शिव मत करना। यहाँ शिव के चित्र में जो सिंगार या मेकअप है ऐसी कोई कल्पना नहीं कर लेना। बहुत लोग गड़बड़ कर चुके हैं ऐसी।

शिवत्व की अनुभूति के बाद आचार्य शंकर ने बोध-दशक और आत्मषटक में बार बार कहा कि मैं शिव हूँ... मैं शिव हूँ...। कुछ भी नहीं बचने के बाद भी कुछ सूक्ष्म का अस्तित्व रहता है जो नाम, रूप, गुण, आकार और प्रकार से परे है। वह मेरा स्वरूप है। वह केवल शिव मात्र है। उसे ही केवल्य पद या विदेहावस्था कहा गया है।

तूयावस्था ध्यान में ध्यान धरने की आवश्यकता नहीं रहती। जो कुछ भी होता है वह ध्यानस्थ अवस्था में ही होता है। आपको प्रश्न उठ सकता है कि तो फिर आप कैसे दावा कर सकते हैं कि यह मेरी दी हुई ध्यान विधि है?

प्रिय साधको!

यहाँ दावे को कोई प्रश्न नहीं है। शास्त्रीय सिद्धांतों से मुझे यहाँ कुछ भी साबित नहीं करना है। मेरा कहना सिर्फ इतना ही है कि ध्यान में बैठ जाने के बाद, ध्यान में थोड़े ही विकसित होने के साथ तीव्र भाव से चौथी अवस्था की ओर आगे बढ़ने लगे। ध्यानस्थ होते होते वापस न लौट जाओ। और पहुंच जाओ ज्ञान के सर्वोच्च शिखर पर।

इस अवस्था में शांति, आनंद और ध्यान की सहज निष्पत्ति होने लगती है। इस अवस्था की व्याख्या करना शब्दों से संभव नहीं है। मैं तूयावस्थाभाव की धारणा के प्रति आपको इसलिए ले जा रही हूँ कि ज्यादातर लोग इस शब्द का विस्मरण कर चुके हैं। पंडितों ने शास्त्र को कठिन बना दिया। तथाकथित योगियों ने योग को धंधा बना लिया। और पश्चिम के रंग में रंगे हुए ध्यानिनों ने ध्यान को विकृत कर दिया।

दूसरी ओर भाषा को लेकर भी भारत में एक क्रांति घटी। आज के युग को मैं भाषा का संक्रांति युग कहूँगी। इस संक्रांति के मोड़ पर संस्कृत और परिनिष्ठित हिन्दी जिसे राजभाषा और राष्ट्रभाषा कहते हैं उससे मनुष्य दूर होता जा रहा है और अंग्रेजी भाषा निकट आ रही है। मेरी समझ में आने वाली किसी भी भाषा के साथ मुझे अच्छा लगेगा क्योंकि शब्द ब्रह्म है, जरूरत पड़ेगी तब गुजरात में भी अंग्रेजी में बोलने लगेंगे। परंतु संस्कृत और वेदों की शब्दावली लुप्त होने के कारण नई पीढ़ी को कुछ खास शब्दों के अज्ञान की वजह से थोड़ा नुकसान हो सकता है क्योंकि भाषा की समझ नहीं है तो उस भाषा के शब्द समझ नहीं आएंगे। जब भाषा लुप्त ही होती जा रही है और खास शब्द सुनने में

भी नहीं आ रहे हैं तो उन शब्दों के अर्थ को जानने की जिज्ञासा भी कहाँ से पैदा होगी ?

ऐसा ही एक शब्द है तूयावस्था। आज के युवक युवतियाँ निद्रावस्था, जाग्रतावस्था और स्वप्नावस्था इन तीन को तो जानते हैं। क्योंकि वह उनका अनुभव है तो शब्द सुनते ही बात समझ में आ जाती है। परंतु तूयावस्था से मनुष्य इतना दूर चला गया कि धीरे धीरे समाज में से यह शब्द और अवस्था दोनों लुप्त होने लगे।

मैं जो कुछ भी बोल रही हूँ वह रूढ़िवादी सांप्रदायिक लोगों के लिए नहीं बोल रही हूँ। मैं उन घिसीपिटी स्लेटों के लिए हूँ ही नहीं। उनपर कुछ सत्य के अक्षर लिखने की कोई संभावना ही नहीं बची है। मैं बोल रही हूँ भारत के नवयूवक-युवतियों के लिए जिसमें अपार ऊर्जा, खेलदिली और कुछ नया जानने की जिज्ञासा पड़ी है। अथवा ऐसे लोगों के लिए बोल रही हूँ कि जिसके पास सत्य के लिए एक ग्रहणशील चित्त है।

ज्ञान का संबंध उम्र के साथ नहीं होता समझ के साथ होता है।

प्रिय साधको !

तूयावस्था का अनुभव मात्र ध्यान के द्वारा ही संभव है और एक ध्यानी ही जान सकता है एक दूसरे ध्यानी की इस अवस्था को। वैसे तो प्रत्येक ध्यान विधि के द्वारा आप इस अवस्था तक पहुँच सकते हो परंतु जरूरी नहीं कि आप बैलगाड़ी में ही बैठकर यात्रा करो। अगर आपकी क्षमता है तो आप प्लेन में बैठकर विराट आकाश का दर्शन त्वरित कर सकते हो, ऊपर उठ सकते हो।

प्यारे साधको !

वैसे तो जीव मात्र में परम चैतन्य का सहज स्वाभाविक निवास है। परंतु योग शास्त्रों ने जीव की भिन्न भिन्न अवस्थाओं के अनुसार, तथा जीव की विविध भूमिका के अनुसार उसका नामकरण किया है।

जैसे एक ही व्यक्ति विविध क्षेत्र में काम कर रहा हो तब उसकी पहचान भी बहुआयामी बन जाती है। वैसे ही जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति (निद्रा) और तूया ये चारों अवस्थाओं में जीव को विशेष उपाधी (नाम) दी गई है।

जाग्रत स्थिति में योग शास्त्र जीव को “विश्व” नाम से पहचानता है। अर्थात् जाग्रतावस्था में वह दौड़ते फिरते जगत का एक अंश भी है और उस जगत को देख भी रहा है। वह एक भी है और अनेक के साथ भी है। जाग्रत स्थिति में वह विश्वरूप बन जाता है। विश्व का एक अंश होने के नाते इस विश्व में उसका भी कहीं वजूद है। और अपने दुन्यवी वजूद का उसे बोध रहता है।

इस विश्व स्वरूप में जब जीव होता है तब उसे भी विश्व में अपना एक खास स्थान बनाने की इच्छा और लिप्सा रहती है अपना वजूद सिद्ध करने के लिए। क्योंकि वह विश्व में यही देखता है। दुनिया इसीलिए ही दौड़ती है।

स्वप्नावस्था में उसे तेजस नाम से जाना गया है। क्योंकि खुद अर्ध बेहोश है और नेत्र बंद हैं, फिर भी भीतर का मन स्वप्न को देख सकता है। क्यों ? जीव की एक अपनी खास शक्ति है। वह उसका अपना तेज है। यह एक विशिष्ट अवस्था है उसकी। विशिष्ट इसलिए कहती हूँ कि जब शरीर बेहोश है और इन्द्रियों के सारे द्वार बंद हैं फिर भी अपने तेज से अपने बल से भीतर लीला चलाता रहता है।

स्वप्न और जाग्रति की गैर मौजूदगी को निद्रावस्था कही है। जिसमें जीव को प्राज्ञ नाम से संबोधित किया गया है। इस अवस्था में शरीर अचेतन जैसा पड़ा है, इन्द्रियाँ शांत हैं, शरीर के ज्यादातर द्वार बंद हैं, परंतु भीतर “प्राज्ञ” स्वरूप में जीव जागता रहता है। प्राज्ञ शब्द का अर्थ है ज्ञानी, सद्बुद्धिमान। वह प्राज्ञ नाम का जीव शब्द और स्पर्श आदि का ज्ञान निद्रा में भी कर लेता है।

मान लो कि आप नींद में हैं। आपकी चेतना सोई हुई है फिर भी उसकी हज़री है, उसने विदा नहीं ले ली है। इसलिए निद्रावस्था को गलती से भी कभी छोटी मृत्यु मत कहना। अगर आप ऐसी गलत फेहमी में हैं तो आज से इसे दूर कर देना। निद्रा में मनुष्य की चेतना ऊपर ऊपर से सोई है परंतु गहन तल पर सजग है। विशेष स्पर्श और शब्द से वह जाग उठती है। और शरीर तथा इन्द्रियों को बोध कराने लगती है।

उदाहरण के तौर पर मान लो कि आप गाढ़ निद्रा में हो और कोई आपका नाम लेकर जोर से पुकारेगा तो आप तुरंत जाग जाओगे। आपका हाथ पकड़कर कोई ज़ोर से हिलाएगा तो आप फटाक से जाग उठोगे। इसका अर्थ है कि आप मरे हुए नहीं हो, ज़िंदा हो। अचेतन नहीं हो गए हो, केवल चेतन मन सोया था निद्रा में, जो मन की एक वृत्ति है वह पल रही है, पुष्ट हो रही है, उसका निर्वाह हो रहा है। आराम मिल रहा है आपके मन को, शरीर को, बुद्धि को और अहंकार को।

निद्रा में ज्ञान स्वरूप आत्मा दूर दूर कहीं सूक्ष्म तल पर प्रज्ञावान अर्थात् एक जाग्रत दृष्टा की तरह साक्षीभाव से स्थिर रहता है। सारे आवरण गिर जाते हैं। बुद्धि प्रयोग मिट जाते हैं कुछ घंटों के लिए। मन की माया जाल से जीव मुक्त हो जाता है। और अहंकार विसर्जित हो जाता है। कम से कम रात भर।

राजा महाराजा हो या डाकू। तलवार की नौक पर कानून चलाने वाला हो कि एक दीन हीन मनुष्य, निद्रा में सारा अहंकार, अज्ञान और सुख दुख का बोझ अदृश्य हो जाता है। पास में बंदूक पड़ी हो या शास्त्र, धन पड़ा हो या विश्वसुंदरी, सबकुछ निरर्थक।

प्यारे साधको !

या तो निद्रा में यह अवस्था घटती है अथवा तूर्यावस्था में।

फर्क इतना है कि निद्रा में शरीर का बोध छूट जाने की वजह से कुछ घंटों के लिए सबकुछ निरर्थक हो जाता है और नींद खुल जाने के बाद फिर से हावी हो जाता है। जबकि तूर्यावस्था में अखंड बोध जाग जाने की वजह से संसार की निरर्थकता के प्रति पुनः कभी आकर्षण नहीं होता।

निद्रावस्था और तूर्यावस्था में सूक्ष्म भेद है। परंतु एक ध्यानी के लिए इस भेद को जान लेना अनिवार्य है।

निद्रा में समग्र रूप से निर्विषय अवस्था उतरती है और जागने के बाद शरीर और मन फिर से विषयों में उतरता है। परंतु तूर्यावस्था में साधक विषयों के पार चला जाता है।

निद्रा में चेतना की निष्क्रिय उपस्थिति है और जागने में क्रियाएं शुरू हो जाती हैं जबकि तूर्यावस्था में केवल चेतना ही चेतना बचती है। वहाँ क्रिया में स्थूलता नहीं परंतु जाग्रति और सूक्ष्मता होती है।

निद्रा एक कुछ घंटों की अर्धमूर्छित अवस्था है परंतु तूर्यावस्था में संपूर्ण जाग्रति बनी रहती है। वह जाग्रति की पराकाष्ठा ही है।

निद्रा में पराधीनता है और तूर्यावस्था में परम स्वतंत्रावस्था।

निद्रा एक वृत्ति है जबकि तूर्यावस्था संपूर्ण वृत्तियों से मुक्ति है। निद्रा में केवल शरीर मन और मस्तिष्क शांत होते हैं। जबकि तूर्यावस्था में सर्व प्रकार के आवरण अज्ञान और अविद्या से मुक्ति हो जाती है।

प्रिय साधको !

मैं चाहती हूँ कि आप तूर्यावस्था शब्द को समग्रता से समझ लो, जान लो। फिर प्यास जगाओ उस अवस्था का दर्शन करने के लिए। फिर ध्यान का आरंभ करो। तूर्यावस्था ध्यान विधि से गुजरकर आप जान लो इस अवस्था को, और धीरे धीरे ध्यान करते करते सराबोर हो जाओ इस अवस्था में। यह अवस्था शिवत्व की अवस्था है। तूर्यावस्था और शिवत्व अलग अलग नहीं हैं।

शिवत्व है साक्षी का कल्याणमय स्वरूप। वह स्वरूप तो हमेशा सर्व का साक्षी बना रहता है। और इस अवस्था में साधक साधक न रहकर। समाधि सिद्धि के स्वामी बन जाते हैं।

## धरणा - ४०

### श्वास प्रश्वास मध्यदशा ध्यान

प्यारे साधको !

अब हम जा रहे हैं विधियों की ओर। श्वास से संलग्न प्रथम विधि कहती है कि आपका श्वास जब भीतर आता है और बाहर जाता है उन दोनों प्रक्रिया के बीच में आप स्थिर हो जाओ, वहाँ कल्याण बरसता है।

प्रिय साधको !

जबतक आप श्वास लेते हो तब तक प्राणी अथवा जीव हो। जब श्वास नहीं लेते हो तब परमात्मा हो। ध्यान रहे ! मेरे शब्दों का अनर्थ मत करना। “ श्वास नहीं लेते हो ” – का मतलब यह नहीं कि श्वास लेने की प्रक्रिया को रोकना। परंतु श्वास नहीं लेने का मतलब है – जिस क्षण में आपको पता ही नहीं चलता कि आप श्वास नहीं ले रहे हो – ऐसा क्षण। उसे आप ऐसा क्षणांश कह सकते हो कि जहाँ भीतर के तंत्र की अक्रिया के उपरांत भी जीवन है। उस क्षण को समय के परिमाण से नापा नहीं जा सकता। उसे क्षण का शतांश कह सकते हो। या क्षणांश कह सकते हो।

वह क्षणांश प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न भिन्न होता है। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की श्वास प्रश्वास की गति भिन्न भिन्न होती है। वह गति मनुष्य की प्रकृति और मन के अनुसार होती है।

प्रिय साधको !



याद रहे, प्रत्येक व्यक्ति के लिए श्वास को रुकने का एक साधारण बिन्दु होता है। जिसे आप एक विराम बिन्दु भी कह सकते हैं। मनुष्य जब श्वास लेता है और छोड़ता है उन दो प्रक्रियाओं के बीच में एक अल्पक्षण का विराम बिन्दु घटित होता है। मनुष्य को पता तक नहीं चलता है कि उसके प्राण ने कब, कहाँ और कैसे विराम ले लिया ?

ध्यान विधि कहती है कि वह विराम बिन्दु में ही परमात्मा का, श्रेय का, कल्याण का अनुभव है। उसी बिन्दु पर आशीर्वाद की वृष्टि है। अक्रिया में भी अखंड अस्तित्व – ये परमात्मा का स्वाभाव है। वही परम साक्षी भाव है। पूरा ब्रह्मांड चलता रहता है परंतु परमात्मा को कहीं भी प्रत्यक्ष रूप से क्रियान्वित होते हुए आप नहीं देख पाएंगे। समग्र ब्रह्मांड के अपूर्व संचालन के चालक होते हुए भी वे साक्षी हैं। मनुष्य और परमात्मा में इतना तो फर्क है!

जब तक आप कुछ करते हैं – यहाँ “आप” का अर्थ आपका शरीर, नासिका, फेफड़े, ऊर्जा इत्यादि। जब तक आप कुछ करते हो तब तक आप मनुष्य हो। जब कुछ भी किए बिना भी अस्तित्व टिका रहा है वहाँ परमात्म क्षेत्र का आरंभ है।

श्वसन क्रिया में श्वास प्रश्वास के मध्य में एक ऐसा बिन्दु आता है जहाँ आप कुछ भी नहीं करते हैं। श्वसन तंत्र के अवयवों को विराम मिल जाता है। ध्यानी के सिवाय इस तथ्य का अनुभव अन्य किसी के पास नहीं हो सकता। क्योंकि यह बात सिर्फ ध्यान के द्वारा ही समझ में आ सकती है।

उस क्षण में आप जिन्दा होते हुए भी श्वास नहीं ले रहे हैं। मनुष्य एक दिन में २१६०० बार श्वसन क्रिया में से गुजरता है। और इतनी ही बार यह परमात्म बिन्दु पर विराम भी होता है।

विज्ञान कहता है कि मुर्दा श्वास नहीं लेता परंतु २४ घंटे में जो २१६०० बार विराम का क्षण आता है तब आप श्वास नहीं लेते हो फिर भी मुर्दा नहीं हो। जिन्दा होते हुए भी उन क्षणों में कुछ करते भी नहीं हो। आप के अवयव क्षणभर के लिए विराम में हैं, दिन में हजारों बार। तो वहाँ ऐसा कौन है कि जो बिना श्वास लिए जिन्दा रहता है ? इस बात को विज्ञान के सामने रखेंगे तो विज्ञान उसे श्वसनतंत्र का मेकेनिज्म कहेगा। परंतु ऐसा क्यों होता है ? इसका जवाब विज्ञान के पास नहीं है। वहाँ से परमात्म क्षेत्र का आरंभ होता है। उस जीवंत, अक्रिय और परम साक्षी तत्व को मैं परमात्मा कहती हूँ।

इस ध्यान विधि से ही अर्थात् श्वास-प्रश्वास के मध्य के क्षणिक स्थिर बिन्दु पर ही बुद्ध को ज्ञान घटित हुआ था। फिर तो बौद्ध संप्रदाय में यह विधि बहुत प्रचलित हुई। विश्व के ज्यादातर लोग इस विधि को बौद्ध विधि के नाम से ही जानते हैं। क्योंकि बुद्ध के शिष्यों के द्वारा इस विधि का ज्यादा से ज्यादा प्रचार हुआ। मूल में यह विधि भारत की एक शिव द्वारा दी हुई और आदि अनादि से चली आ रही विधि है।

परंतु एक विशिष्ट अभिगम के साथ मैं कह सकती हूँ कि ध्यान न बौद्ध है, न शैव है, न शाक्त है; ध्यान है गंगा के प्रवाह जैसा। ऐसा नहीं कि गंगा भारत में प्रवाहित हुई तो मुस्लिम या इसाई की प्यास नहीं बुझाएगी! वह तो सबको कुछ न कुछ देती ही रहती है। ठीक ऐसा ही है ध्यान। जो ध्यान को धारण करेगा, ध्यान उसका हो जाएगा।

यहाँ दो बिन्दुओं पर कल्याण घटता है, ऐसा विधि कहती है। जब श्वास बाहर जाता है तब क्षणभर के लिए रुकता है। जब श्वास भीतर आता है तब बाहर जाने के पहले क्षणिक रुकता है। इस क्षण में सारी क्रियाएं रुक जाती हैं। वह विराम ही जीवन है। वह विराम ही मनुष्य को स्वस्थ रखता है और अवयवों को पुनः पुनः पुनः कार्यान्वित होने की शक्ति बख्शता है। इसीलिए शिव ने कहा है कि उन बिन्दुओं में कल्याण घटित होता है। वह विराम देने वाले स्वयं परमात्मा हैं। योग की भाषा में उसे अंतरकुंभक और बहिरकुंभक कहते हैं।

एक दूसरी बात भी याद रहे, तंत्र विज्ञान और योग विज्ञान दोनों स्वतंत्र मार्ग होने पर भी एक दूसरे से विपरीत नहीं हैं। एक दूसरे के सहयोगी जरूर हैं। ध्यान के बिन्दु पर आकर तंत्र और योग दोनों प्रवाह कहीं एक दूसरे में विलीन हो जाते हैं। यहाँ मुझे योग के विषय पर बात नहीं करनी है। अभी मेरा ध्येय आपको केवल ध्यान विधियों से अच्छी तरह से अवगत कराने का है। वह ध्यान विधान भले किसी भी स्रोत से आया हो।

मेरे ध्यान शास्त्र में आपको तंत्र, योग, हठयोग, उपनिषद्, योगवशिष्ट, पुराण इत्यादि से निकले हुए और कुछ नूतन ऐसे विविध ध्यान के झरनों की झलक मिलेगी।

ये भी जरूरी नहीं है कि मेरी ध्यान विधि कोई शास्त्रीय स्रोत या परंपरागत मार्ग से आई हो। मेरी खास विधियों को किसी शास्त्र में ढूंढने मत बैठना। बहुत सारी ध्यान विधियाँ मेरी खोज और अंतरानुभव से प्रगटी हैं। मेरी अंतरस्फुरणा के द्वारा जिन जिन प्रयोगों से गुजरकर मुझे लगा कि यह प्रयोग ध्यान के लिए माध्यम बन सकता है ऐसी कई प्रक्रियाएं और अंतरघटनाओं को मैंने ध्यान विधि के रूप में साधकों को दे दिया है।

योग शास्त्र कहता है कि श्वसन प्रक्रिया में कुछ ऐसे बिन्दु हैं कि जो अहं चक्र के परे हैं। अर्थात् उसे कोई करने वाला नहीं है। वह सहज घटता है। वही ठहराव बिन्दु को योग शास्त्र कुम्भक कहता है। उस बिन्दु में कल्याण की वृष्टि होती है। उस बिन्दु पर साधक को परमात्म बोध घटित होता है।

हठ योग के द्वारा उन बिन्दुओं को पाने का जो विविध प्रयास है उन्हें विधियों को हठयोग प्रदीपिका सहित, सूर्यभेदी, उज्जायी, शीतली, भ्रूक्षिका, भ्रामरी और प्लाविनी अथवा मूर्छा के नाम से जानती है।

तंत्र निर्दिष्ट ध्यान विधियाँ सहज मार्ग की हैं। मुझे यहाँ हठ योग की ज्यादा बात नहीं करनी है। यहाँ केवल मुझे ध्यान विधि की चर्चा करनी है।

तंत्र के अनुसार किसी भी प्रकार की हठ, आग्रह या शरीर के साथ कुछ दमन या जबरदस्ती किए बिना आठ प्रकार के सहज प्राणायाम घटते हैं। जिसे मैं आपकी व्यवस्था के लिए स्वाभाविक प्राणायाम कहूँगी। आप उसे कुदरती प्राणायाम भी कह सकते हैं। जिसका आयाम अपनेआप बदलता रहता है।

योग का कुम्भक शब्द अत्यंत महत्वपूर्ण है। श्वसन क्रिया पर ध्यान करने वाले साधक को इसका अर्थ समझ लेना बहुत जरूरी है। प्राणायाम की बात निकल ही गई है तो श्वास की तीनों गति के नाम भी समझ लीजिए।

मनुष्य जब नासिका के द्वारा श्वास भीतर लेता है और शरीर को भीतर आए हुए श्वास के कारण अपने भीतर एक भरी पूरी अवस्था का अनुभव होता है, इसलिए योग मार्ग उस क्रिया को पूरक कहता है।

जब वही श्वास क्षणांश के लिए कोई अज्ञात स्थान पर ठहरता है, उसे कुम्भक कहा गया है।

जो श्वास शरीर के बाहर निकलता है अर्थात् जिस श्वास का नासिका के द्वारा रेचन हो जाता है, अर्थात् बाहर फेंका जाता है, इसलिए उसे रेचक नाम से जानते हैं।

पूरक और रेचक के कोई विशेष प्रकार नहीं हैं। परंतु कुम्भक के दो प्रकार बताए हैं। मनुष्य के भीतर जाकर जो श्वास क्षणिक ठहरता है वह है अंतरकुम्भक। और बाहर निकलने के बाद भी क्षणभर के लिए जब श्वास विराम लेता है वह है बहिरकुम्भक।

जहाँ तक विधियों में आयास प्रयास की बात है वहाँ तक वह योग मार्ग है। वहाँ दमन, संयम, नियम इत्यादि लागू होता है। परंतु जहाँ से स्वाभाविकता और साक्षीभाव का आरंभ होता है, स्वीकार और समग्रलक्षिता का आरंभ होता है वहाँ से तंत्र और ध्यान विज्ञान का आरंभ समझना। एक बार फिर से कहूँगी कि ध्यान बिन्दु पर योग और तंत्र दोनों कहीं न कहीं जरूर मिलते हैं।

ध्यान, योग का सांतवां सोपान है। उसे मैं योग की अंतिम ऊंचाई कहती हूँ। क्योंकि समाधि अर्थात् आठवें सोपान पर तो सबकुछ विसर्जित हो जाता है। वहाँ अस्तित्व रहता है केवल परमात्मा का।

एक और बात भी ध्यान से समझ लें। हाँ, बात थोड़ी कठिन या शास्त्रीय लग सकती है। परंतु विधि के अनुसार कुछ खास बातों का समझना अनिवार्य हो जाता है। योग और तंत्र दोनों शरीर के स्थानों के अनुसार वायु के दो खास नाम देते हैं – प्राण और अपान। हृदय, कंठ, तालुमूल, ललाट, ब्रह्मरंध्र और द्वादशांत में (सुषुम्णा नाड़ीमें) प्राण की गति रहती है। अर्थात् उन स्थान के वायु को योग एवं तंत्र दोनों प्राण के नाम से जानते हैं। और हृदय तथा नाड़ियों के मुख का संकोच और विकास अपान की गति का स्थान है अर्थात् उस स्थान पर स्थित वायु को अपान कहते हैं।

उस प्रक्रिया में एक क्षण ऐसा आता है कि जहाँ प्राण अस्त हो जाता है और अपान उदित नहीं होता। उस क्षण को अर्थात् प्राण या अपान को रोके बिना सहज ही बाह्य कुम्भक की प्राप्ति हो जाती है। और इसी तरह एक क्षण के लिए अपान अस्त हो जाता है। और प्राण उदित नहीं हुआ होता तब स्वाभाविक रूप से आंतरकुम्भक की प्राप्ति होती है।

इसे तंत्र शास्त्र मध्यदशा कहते हैं। उसे ही परम पद कहा है। परंतु उस मध्यदशा को ध्यानी ही जान सकता है। उस क्षण के लिए जो साधक पूर्ण रूप से अंतर्मुख हो जाता है उसका श्रेय घटित होता है। जिस साधक का ऐसी मध्यदशा में प्रवेश हो जाता है वह मुक्त हो जाता है।

प्रिय साधको!

श्वास जीवन है। कुछ लोग कहते हैं कि भीतर आने वाला श्वास जीवन और बाहर जाने वाला श्वास मृत्यु है। परंतु मेरा अनुभव कहता है कि दोनों गति जीवनदायक हैं। दोनों में से एक भी का अटक जाना मृत्यु है।

बाहर जाने वाला श्वास शरीर के भीतर की अशुद्धियों को बाहर फेंकता है। वह तो भीतर की शुद्धिकरण की प्रमुख और प्रारंभिक प्रक्रिया की शुरुआत है। उसे मृत्यु कैसे कहेंगे!

हाँ, श्रम के कारण रक्त के भीतर के ओक्सीजन का उपयोग होता है। और कार्बनडायोक्साइड पैदा होता है जिसे अंगार वायु भी कहते हैं। वह वायु मनुष्य के लिए हानिकारक है। भीतर की अशुद्धि है। उसे बाहर नहीं फेंका गया तो मनुष्य मर जाएगा।

तो याद रखिए, श्वास वातावरण में से प्राणवायु को लेकर जीवन देता है। और उच्छ्वास देह की अशुद्धियों को बाहर फेंककर जीवन बचाए रखता है। इन दोनों प्रक्रिया के कारण ही जीवन संभव है। मनुष्य की बात को छोड़कर थोड़े विस्तृत रूप से आगे बढ़ें तो मनुष्य का उच्छ्वास अर्थात् अंगार वायु भी जीवनदायक है। आप कहेंगे कैसे ? इसका जवाब है, वृक्ष योनि। ब्रह्मांड में कुदरत का अद्भुत समायोजन है। मनुष्य की बाहर जाने वाली श्वास दिन में वृक्ष का जीवन बन जाती है। और वृक्ष की दिन में की हुई उच्छ्वास दिन में मनुष्य का जीवन बन जाता है।

एक दूसरी बात का स्मरण रहे – जहाँ तक मृत्यु की बात है, तो मृत्यु की घटना तो मनुष्य के जन्म के साथ ही शुरू हो जाती है। केवल श्वसन क्रिया उन्हें जिन्दा रखती है।

परंतु साधारण जीवन के उपरांत भी एक जीवन है। जिसे हमारे ऋषि आध्यात्मिक जीवन कहते हैं। उस आध्यात्मिक जीवन का अनुभव ध्यान विज्ञान के अनुसार दो श्वासों के बीच के अंतराल में घटित हो सकता है।

उस बिन्दु को जान लेता है वो पूर्णकाम हो जाता है। परंतु उस बिन्दु को खोजने के लिए आपको आपकी श्वसन प्रक्रिया को लगातार देखनी पड़ेगी। समग्रतया श्वसन को देखना ही ध्यान बन जाएगा।

श्वास की अंतरगति को देखते देखते ही मन अदृश्य हो जाएगा। एक अर्थ में आप श्वासन ही बन जाएंगे। और अचानक श्रेय घटेगा, आप पा लेंगे उस परम विराम के बिन्दु को।

सामान्य रूप से जब श्वास रुक जाती है तब क्या होता है उसका हमको अच्छी तरह से पता है। भय, घुटन, घबराहट, खांसी..... परंतु दिन में इक्कीस हजार से चौबीस हजार बार होती हुई इस प्रक्रिया में उतनी ही संख्या में यह विराम बिन्दु आता है।

परंतु मनुष्य को कोई घबराहट या घुटन का अनुभव नहीं होता। आपको पता नहीं है उस विराम का, यह एक अलग बात है। परंतु श्वास के क्षण भर के लिए रुकने पर भी मनुष्य को कोई तकलीफ नहीं होती। इसलिए तो मैं उसे परम विराम बिन्दु कहती हूँ। इस बिन्दु का साक्षात्कार सिर्फ ध्यान के द्वारा हो सकता है।

प्रिय साधको !

आपको श्वास के इस कुदरती विरामबिन्दु के साक्षात्कार करने के लिए स्वश्वासनिरीक्षण की प्रक्रिया से गुजरना पड़ेगा। इस विधि से गुजरने के बाद ही आप उस कल्याणकारी क्षण का अनुभव कर सकते हैं।

इन्सान जिन्दगीभर मशीन की भांति हांफता रहता है। आंतरिक प्रक्रियाओं का कभी निरीक्षण तो करता ही नहीं। यह ध्यान विधि आपको मौका देती है अपने श्वास के निरीक्षण का और उस निरीक्षण के दौरान एक क्षण ऐसा आ जाएगा कि घटना घटित हो जाएगी।

एक ऐसी घटना कि जहाँ केवल परमात्मा है, कल्याण है, महासत्य है। याद रहे, सत्य और परमात्मा भिन्न भिन्न नहीं हैं। परमात्मा जन्म और मृत्यु से पर है। उसे जन्म से भी कोई फर्क नहीं पड़ता, मृत्यु से वे विचलित नहीं होते, यही परम कल्याण की अवस्था है। जो बुद्ध ने, महावीर ने, ईसु ने प्राप्त कर ली थी।

प्यारे साधको !

उस बिन्दु को पकड़ने के लिए क्या करेंगे ? मैं कहती हूँ कि एक विशुद्ध स्थान पर ध्यान संकल्प के साथ बैठ जाओ सुखासन में। अपनी सजग चेतना के द्वारा श्वास के संग हो लो। श्वास के साथ आओ अपने भीतर, श्वास के साथ जाओ बाहर, श्वास रूप बन जाओ, विधि में तल्लीन हो जाओ। उस विराम बिन्दु को आप प्राप्त कर लेंगे।

श्वास के बीच के उस विराम बिन्दु को पाने के लिए विचलित मत होना, उतावले मत होना, भीतर ही भीतर इधर-उधर भटकना भी नहीं, बिन्दु को पाने की लालसा भी मत करना। लालच आपको ध्यानभ्रष्ट कर देगी। आप सिर्फ प्रक्रिया में रूपांतरित हो जाओ, पिघल जाओ विधि में।

यात्रा सूक्ष्मातीत होते ही, सूक्ष्म का अनुभव हो जाएगा और वह सूक्ष्म बिन्दु परम श्रेयस्कर होगा। और आपको परम विराम बक्षेगा।

# छिबुंभक वर्तुल बिंदु प्रवेश ध्यान

प्रिय साधको !

अब श्वास की गति से संलग्न एक अन्य विधि की ओर हम जा रह हैं। यह विधि भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। पहले विधि की भूमिका समझ लीजिए।

श्वास और प्रश्वास का एक आवर्तन पूरा होने से एक वर्तुल बनता है। आवर्तन एक बहुत महत्वपूर्ण शब्द है। प्रारंभ बिन्दु से लेकर पूर्ण बिन्दु तक की प्रक्रिया से एक आवर्तन बनता है।

संगीत में आवर्तन शब्द का विशेष महत्व है, खास करके ताल में। संगीत में सम से सम तक की मात्राओं के वर्तुल को आवर्तन कहते हैं। ताल की पहली मात्रा को संगीत की भाषा में सम कहते हैं। उस पहली मात्रा से लेकर जितनी मात्रा का ताल हो उतनी मात्रा बजकर फिर से सम पर आने की गतिविधि को एक आवर्तन कहते हैं।

ऐसा आवर्तन श्वसन में भी होता है। श्वास की प्रमुख दो मात्रा एवं दो सूक्ष्म मात्रा हैं। श्वास, प्रश्वास और दोनों के मध्य में क्षण भर के लिए बिना आयास प्रयास का श्वसन का अंदर और बाहर का स्थिरत्व। इस क्रिया से श्वास प्रश्वास का एक वर्तुल पूरा होता है। यह क्रिया भी वर्तुलाकार है, कैसे ? जरा समझते हैं।

हम जब बाहर से अर्थात् नीचे की ओर से श्वास भीतर लेते हैं वह अन्य वायु से युक्त मिश्रित प्राणवायु होता है। और जो उच्छ्वास में निकलत है वह कार्बनडायोक्साइड अर्थात् अंगारवायु है, जो बात पहली विधि में स्पष्ट हो गई है।

प्राणवायु अंगारवायु से भारी होता है। वातावरण में नीचे के भाग में ओक्सीजन का प्रामाण अर्थात् प्राणवायु का स्थान विशेष है। क्योंकि वह भारी है, भारी चीज का पल्ला वैसे भी नीचा होता है। विज्ञान के नियम के अनुसार भारी चीज नीचे की ओर जाती है और हल्की चीज ऊपर की ओर।

हम वातावरण के निम्न भाग की ओर से नासिका द्वारा प्राणवायु को खींचते हैं और कार्बनडायोक्साइड बाहर फेंकते हैं जो ऊपर चला जाता है। ऊपर की हवा पतली होती है। इसका कारण ही यही है। ऊचाई पर या पर्वत पर चढ़ने वाले कई लोग थक जाते हैं क्योंकि वहाँ की हवा पतली होने के कारण उन्हें पर्याप्त मात्रा में प्राणवायु नहीं मिलता है। मैंने सुना है कि अंतरिक्षयात्री को पर्याप्त मात्रा में ऑक्सीजन को अपने साथ रखना पड़ता है।

कुछ अपवादों को बाद करके मनुष्य से लेकर ज्यादातर प्राणियों की नासिका के छिद्र पृथ्वी की ओर हैं, आकाश की ओर नहीं। जीव की सरलता के लिए परमात्मा ने यह रचना की है। पृथ्वी की ओर से मनुष्य प्राणवायु को नासिका के द्वारा अपनी ओर खींचकर जीवन का अनुभव कर सकता है।

योग शास्त्र ने प्राण को सर्वोच्च माना है। वह मनुष्य के लिए जीवनदायक है। तंत्र शास्त्र भी प्राण का स्थान ऊपर और जीव का स्थान नीचे कहता है। क्योंकि जीव का अस्तित्व प्राण की वजह से है।

ध्यान शास्त्र की भाषा लौकिक विज्ञान से भिन्न है और भिन्न होने की खास वजह भी है। उसे जरा सूक्ष्मता से समझना पड़ता है। ध्यान शास्त्र का एक अलग और विशेष समझ के साथ अनुभव करना पड़ता है।

हमारे ध्यान शास्त्र में आधुनिक विज्ञान की व्याख्याएं सहज रूप से समाविष्ट हो जाती हैं। परंतु विज्ञान में ज्ञान की व्याख्या का समावेश नहीं मिल सकता।

ध्यान वैज्ञानिक कुदरत के परम सत्यों को पा लेता है परंतु साधारण वैज्ञानिक परमात्मा के रहस्यों से वंचित रह जाता है।

हजारों बरसों पहले का कालनिर्णय अर्थात् समय के परिमाण की गणना, जीव सृष्टि विषयक ज्ञान इत्यादि को विज्ञान धीरे धीरे सिद्ध कर रहा है। परंतु हजारों वर्षों के बाद भी विज्ञान ध्यान में घटित रहस्यों को सिद्ध नहीं कर पाएगा क्योंकि वह प्रत्येक ध्यानी के साथ प्रत्येक बार घटित होता एक नया अनुभव होगा उसे व्याख्या कि नियम अथवा सिद्धांत में नहीं बांधा जा सकता। ध्यान के कुछ अतिनियम हैं और ध्यान अतिसैध्यांतिक है अर्थात् सिद्धांतों के पार है।

ध्यान को सिद्ध करने के लिए ध्यान ही अनिवार्य है। हालांकि वैज्ञानिक वैज्ञानिक प्रयोग करने के लिए उनके प्रयोग में ध्यान देकर ही सफलता प्राप्त करते हैं परंतु वह एक विषयलक्षी ध्यान है।

मैं कहती हूँ कि विषयलक्षी ध्यान देने से भी जो विज्ञान की असाधारण सफलताएं प्राप्त होती हैं तो सत्य, तत्व और सत्त्वलक्षी एवं



ध्यानलक्षी ध्यान से साधक की शक्ति कितनी विकसित हो पाएगी, इसका अनुमान तक नहीं लगाया जा सकता।

प्रिय साधको !

अब ध्यान विधि को जरा पैने ढंग से समझ लीजिए। प्रथम विधि में श्वास प्रश्वास के मध्य में एक बिन्दु था जहाँ श्वास तनिक ठहरता था, साधक को उस ठहराव बिन्दु पर ध्यान करना था। अब यहाँ श्वास संबंधित दूसरी विधि में श्वास की आवागमन क्रिया में, जहाँ श्वास दो बिन्दु में मोड़ लेता है उस टर्निंग प्वाइंट पर स्थिर होकर साधक को परम सत्य को उपलब्ध हो जाना है।

मूल में तो सारी विधियाँ मनुष्य के चित्त के साथ ही काम करती हैं। सतत गतिशील चित्त को स्थिर करने के लिए असंख्य विधियों का प्रयोग हम कर सकते हैं। परंतु सदाशिव के द्वारा कुछ खास विधियाँ श्वसन क्रिया के आधार पर बताई गई हैं।

हमारे ध्यान ऋषियों ने अभ्यास और अनुभव के द्वारा बताया कि ध्यान में किसी भी बाहरी माध्यम या उपकरण के बिना भी प्रवेश हो सकता है।

आपके ही भीतर उतरने के लिए कुछ घटित हो रही भीतरी कुदरती प्रक्रिया के प्रति सजग हो जाओ। सूक्ष्म में प्रवेश करते ही आप सूक्ष्म को पा लेंगे, जान लेंगे। सूक्ष्म हो जाएंगे। वह सूक्ष्मता ही विराट का सही पता है।

यह ध्यान विधि कहती है कि श्वास प्रश्वास के आवर्तन में वायु दो बिन्दु पर मुड़ती है। अर्थात् जब श्वास लेते हो तब वह कहीं मुड़कर आगे बढ़ती है। और जब श्वास छोड़ते हो तभी भी कहीं मुड़कर बाहर निकलती है। उन तटस्थ बिन्दुओं को पहचान लो।

उन तटस्थ स्थानों को जान लो कि जहाँ वायु को मोड़ लेना ही पड़ता है। वह अनिवार्य मोड़ कौन सा है, यह जानकर उस बिन्दु में प्रवेश करके साधक निर्विकल्पावस्था में पहुंच सकता है और वही शिवत्व की अवस्था है।

प्रिय साधको !

इस विधि में से गुजरने के लिए आपको श्वास की गति बन जाना होगा। आज का आदमी एक ऐसी बाईक जैसा है कि जिसके इंजन का फायरिंग तो चालू है परंतु खड़ी हुई है। खड़ी हुई बाईक पर सवार होकर कैसे पता चलेगा कि टर्निंग प्वाइंट पर क्या घटता है ? वह तो जब बाइक लेकर निकलेंगे स्पीड बढ़ेगी, टर्न आएगा तभी पता चलेगा कि टर्न पर क्या होता है ? और बैलेन्स कैसे करना है ?

परंतु याद रहे, उदाहरण के भाव को पकड़ना शब्दों को मत पकड़ लेना। इस विधि में आपको कुछ भी नहीं करना है। हजारों हजारों साल से श्वास के मुड़ने के स्थान पर कोई अज्ञात शक्ति बैलेन्स कर रही है। आपको केवल पकड़ लेना है उस अज्ञात बिन्दु को। सजगता अपनेआप घट जाएगी।

बात इतनी ही है कि कोई अदृष्ट शक्ति मोड़ रही है आपके श्वास को परंतु आपने कभी भी उसके प्रति ध्यान नहीं दिया है। वह शक्ति कभी अपेक्षा नहीं करती है कि आप उसकी ओर ध्यान दो। वह तो परम साक्षी है। परंतु आपके ही कल्याण के लिए आपमें उस अज्ञान शक्ति के लिए बोध घटे ये जरूरी है।

प्रिय साधको !

ध्यान विधि आपको उस अदृष्ट शक्ति के प्रति सजग कर देगी और एक बार सजग हो जाने के बाद फिर से सो जाने का कोई उपाय नहीं बचता। जाग गए तो फिर जाग गए।

एक बार जाग जाने के बाद तो आपके हृदय में पूरे विश्व के प्रति ऐसी करुणा घटेगी कि आप चाहेंगे कि सब जाग जाएं, सब सत्य को पा लें, पूरा विश्व ध्यान में उतर जाए, दुनिया रूपांतरित हो जाए। ऐसी करुणा घटी थी बुद्ध के हृदय में, तब तो बरसों तक मौन रहने के बाद भी उन्होंने बोलना शुरू किया।

ये जगत द्वंद्व का मेल है, द्वंद्व से ही उसका अस्तित्व है। विरोधाभास में ही उसका जन्म हुआ है। तो पूर्ण जगत तो द्वंद्व मुक्त नहीं हो जाएगा ! अगर ऐसा हुआ, तो फिर उसे मनुष्य जगत नहीं परंतु ब्रह्म जगत कहना पड़ेगा।

परंतु मैं इतना जरूर कह सकती हूँ कि ध्यान में डूबने वालों का द्वंद्व तो अवश्य खत्म हो जाएगा। बाहरी तौर पर उसका अस्तित्व दिखाई देने पर भी वह माया निर्मित अस्तित्व से परे होगा। ध्यान को पा लेने वालों के जीवन में ये विरोध खत्म हो जाएगा। इसी जगत में रहते हुए भी उन लोगों का एक ऐसा विश्व निर्मित होता है कि सामान्य जन को वह भले न दिखाई दे परंतु वह जगत ध्यानियों का परम धाम और ब्रह्म विश्व होता है। जिसका केवल वे ही अनुभव कर सकते हैं और आनंद ले सकते हैं।

ध्यान, इस विरोधाभास से निर्मित और द्वैत तथा द्वंद्व भाव से भरा हुआ और उससे ही जिंदा रहने वाले जगत को बदसूरत बनता हुआ

रोक सकता है।

परंतु इसके लिए कोई भीड़, हंगामा अथवा जिंदाबाद-मुर्दाबाद के नारे काम नहीं आ पाएंगे। मनुष्य अपने भीतर उतर कर ही बाहर के जगत को ज्यादा सुंदर, शांत और स्वस्थ बना पाएगा। यह एक अनुभव सिद्ध बात कह रही हूँ।

श्वास पर आधारित ध्यान विधियाँ चौबीस घंटे आपके पास उपलब्ध हैं। इसके लिए आपको विशेष कुछ करना नहीं है, कहीं जाना नहीं है। किसी को पता तक नहीं चलेगा और आप ध्यान करते होंगे।

यह विधि सर्वत्र सहज प्राप्य, स्वतंत्र, सूक्ष्म और समयातीत है। समयातीत इसलिए कह रही हूँ कि इस विधि के लिए आपको कुछ खास समय निकालने की जरूरत नहीं है। सांसों के संगीत के साथ मिलझुल कर, उसके आरोह अवरोह के साथ बहते बहते आपको पा लेना है कि श्वास के स्वर कहाँ मुड़ रहे हैं?

ज्यादातर लोगों को मोड़ पर ही तकलीफ होती है, मोड़ पर ही गड़बड़ पैदा हो जाती है। फिर वह श्वास क्रिया का दर्शन करना हो या बाइक चलाना।

मैं बचपन में सायकल सीख रही थी। सीधा सीधा चलाना तो सीख लिया थोड़ा बहुत। सिखाने वाले ने रास्ते में आने वाले मोड़ पर सजग रहकर सायकल की गति कम करने का पाठ नहीं सिखाया था। गुरु पर बहुत सारी बातें निर्भर होती हैं। मैं तो निकली सायकल लेकर, पैडल लगाती हुई मस्ती से। करीब सौ दो सौ कदम के बाद मोड़ आया, धड़ाम...। बायाँ मोड़ था स्पीड कम नहीं की थी, सजगता नहीं थी, गति कम करना अथवा गति कम करने के लिए ब्रेक लगाने का शिक्षण नहीं मिला था। पहले सायकल ... सायकल के साथ मैं... हम दोनों को चोट आई। क्या हो गया कुछ समझ में नहीं आया। मुझे तो ऐसा ही लग रहा था कि मैं तो बराबर चला रही थी। सीधी सीधी जा रही थी। मेरी तो कोई गलती ही नहीं है। फिर हम गिरे क्यों? अज्ञानी को अपनी गलती कभी नहीं दिखाई देती है।

फिर किसी ने मुझे समझाया कि मोड़ आते ही गति कम करनी होती है। ताकि किसी से टकराहट भी ना हो जाए और संतुलन भी बना रहे। फिर भी गति तेज है तो ब्रेक मार देना, फिर भी एक दो बार गड़बड़ हुई। ब्रेक कितनी मारना? गति को कैसे संतुलित करना? मोड़ पर कैसे सजग रहना? यह सब सिखाने से नहीं आता सिखाना तो मात्र एक सूचना है, बाहर से दी हुई शिक्षा है। असल में तो यह सब अभ्यास और अनुभव के बाद ही समझ में आता है। जीवन में भीतर और बाहर के आने वाले हर मोड़ नए होते हैं। वहाँ आपकी क्षमता और सजगता को विकसित करना पड़ेगा।

फिर तो पदार्थ पाठ मिल गया। परंतु उदाहरण इसलिए दिया कि आप सब करीब करीब कोई न कोई वाहन तो चलाते ही हैं, मोड़ आते ही मेरी बात याद आएगी। मेरी याद के साथ मेरी ध्यान विधि याद आएगी, फिर चिंतन याद आएगा। संभव है कि बाइक चलाते चलाते भी आप इस ध्यान विधि में उतर सकें। ये छोटी छोटी बातें कभी कभी मनुष्य की जिंदगी में मदद कर जाती हैं।

प्रिय साधको!

यहाँ आपको श्वास जहाँ मुड़ता है उस बिन्दु पर केन्द्रित होना है। मुड़ने के दो स्थान हैं, उन दोनों को मोक्ष बिन्दु समझ लो। अगर उस बिन्दु को पकड़ लिया तो श्वास की आवन-जावन दोनों क्रिया आपके लिए मोक्ष मार्ग बन जाएगी, और वह बिन्दु मोक्ष माध्यम। परंतु मोड़ पर सजगता। उस सजगता के लिए आपको आपकी समग्र चेतना को केन्द्रित करना होगा श्वास के प्रति, संतुलन साधना होगा गति में, श्वास में भागना नहीं है, हाँफना नहीं है, श्वास की गति सहज बनाए रखनी है तभी मोड़ का पता चलेगा।

मंजिल तक पहुंचने के लिए मार्ग में आते हुए सूक्ष्म मोड़ों को अगर ठंग से जान लिया तो यात्रा सरल हो जाएगी। आप भी सलामत, अन्य भी सलामत, साधन भी सलामत, शांति भी सलामत।

ध्यान है एक संपूर्ण सलामती, ध्यान आपको एक ऐसी क्षमता देता है कि आपके सानिध्य में अन्य भी सुरक्षा का अनुभव करता है। ध्यान में प्रवेश करने के बाद जड़ के साथ भी आपका व्यवहार जड़तापूर्ण नहीं रहेगा। आपकी उपस्थिति से जड़ मनुष्य में भी सजगता का संचार होने लगेगा या आप मौन में चले जाएंगे। आपमें व्यवहारिक कार्यों के लिए भी एक अभिजात्य पनपेगा। ध्यान पलायन नहीं सिखाता है। लोग डराएंगे लेकिन डरना मत। ध्यान से आपका संसार, दुनिया, संबंध और सुन्दर हो जाएगा। आपका अभिजात्य आपको सबसे अलग श्रेणी में स्थान देगा।

श्वसन एक कोम्प्यूटराज़्ड प्रक्रिया है। जो कुदरत के द्वारा जन्म से ही प्रिफ़िक्सड है। खाली कोम्प्यूटर चालू पड़ा हो, इससे क्या?

पूरी दुनिया के कोम्प्यूटर चालू पड़े हैं। पड़े पड़े ऊर्जा खा रहे हैं। मैं कहती हूँ कि कम्प्यूटर मिल जाने से या खरीद लेने से क्या? उसे चलाना सीखो, उसकी कला को जानो उसके ओपरेटिंग सिस्टम को जानो, तब वह मशीन काम का है।

सही अर्थ में आप कोम्प्यूटर के मालिक बनो। कोम्प्यूटर का सही मालिक वही है जो उसे चलाना जानता है।

श्वास के मोड़ बिन्दु को समझने के लिए कोम्प्यूटर का उदाहरण शायद आपकी ज्यादा से ज्यादा मदद कर सकता है। अब जरा ध्यान दीजिए। कोम्प्यूटर भले चालू पड़ा है परंतु किसी भी सॉफ्टवेयर का उपयोग करने के लिए आपको “विन्डो” या उसके जैसे किसी भी ओपरेटिंग सिस्टम के थ्रू ही आगे बढ़ना पड़ेगा। परंतु ज्यादातर लोग विन्डो सॉफ्टवेयर का उपयोग करते हैं इसलिए मैंने इसका उदाहरण लिया।

वर्ड, पेजमेकर, फोटोशॉप, कोरल, अडोब प्रीमियर, न्यूएन्डो किसी के भी साथ आपको काम करता है तो विन्डो द्वारा ही जाना पड़ेगा। और विन्डो थ्रू ही बाहर आना पड़ेगा। डायरेक्ट स्विच से कोम्प्यूटर बंद करना यह ज्यादाती है कोम्प्यूटर के साथ। ऐसा करने से कोम्प्यूटर बिगड़ सकता है।

जैसे कोम्प्यूटर में आगे बढ़ने के लिए और वापस लौटने के लिए विन्डो अर्थात् ओपरेटिंग सिस्टम अनिवार्य है ऐसे ही श्वसन क्रिया में भी श्वास का आते जाते वक्त एक खास बिन्दु से मुड़ना अनिवार्य है। ध्यान के क्षेत्र में वह बिन्दु ही मुक्ति का निर्णायक है।

उस बिन्दु से श्वास बाहर न आ पाए तो भी मृत्यु है और उस बिन्दु से श्वास भीतर की ओर न मुड़ पाए तो भी मृत्यु है।

कहने का तात्पर्य यह है कि वे बिन्दु जीवन के लिए निर्णायक बिन्दु हैं। वे बिन्दु श्वास के आपके अस्तित्व के लिए अनिवार्य हैं।

वे बिन्दु तटस्थ और स्वाभाविक हैं। याद रहे, मोड़ तो रास्ते का ही एक भाग है, रास्ता नहीं घूमता, क्रिया घूमती है। हमको मुड़ना पड़ता है। परंतु हम कहते हैं कि रास्ता मुड़ रहा है। वह तो परमात्मा जैसा तटस्थ है। यात्रा हमको करनी पड़ती है, मोड़ हमें लेने पड़ते हैं। प्रत्येक श्वास के आवर्तन में श्वास को मुड़कर आगे बढ़ना पड़ता है। बिल्कुल हमारी तरह ही, श्वास को मुड़ना पड़ता है, बिन्दु को नहीं। वह तो वहाँ है ही। श्वास को मुड़कर, आगे बढ़ना पड़ता है भीतर जाने के लिए और मुड़कर ऊपर उठना पड़ता है बाहर आने के लिए।

उस बिन्दु को जिसने जान लिया उसकी जिन्दगी के अकस्मातों का निवारण हो जाता है। यहाँ मैं भीतरी अकस्मातों की बात कर रही हूँ जो मनुष्य के मन में घटते हैं।

मनुष्य के जीवन में बाहर से ज्यादा दुर्घटनाएँ उसके भीतर घटती हैं। बाहर तो साल दो साल में एक आध छोटी मोटी दुर्घटना घटे तो घटे परंतु भीतर तो दिन में अनेक बार दुर्घटना घटती है।

कभी किसी से नेत्रों का टकराव हो जाता है, किसी से वाणी का। कभी कभी आप किसी से विचार से भी टकरा जाते हैं। वह भीतरी अकस्मात मनुष्य में काम, क्रोध, लोभ, मद, मोह आदि जगाने के जिम्मेदार हैं।

अहं टकराते ही क्रोध बढ़ जाता है, आंखें टकराने से राग-द्वेष बढ़ जाता है, शब्द टकराने से हर्ष-शोक बढ़ जाते हैं। विचारों के टकराव से अशांति पैदा होती है।

भीतर के मोड़ बिन्दु पर आपको स्थिरत्व का अनुभव होगा, वहाँ हर प्रकार का टकराव बंद हो जाएगा। आप अनुभव करना, मेरी बात अनुभव से ही आपकी समझ में आ पाएगी। ध्यान वैसे भी अनुभव का विषय है। सत्संग-चर्चा तो ध्यान की भूमिका मात्र है।

ध्यान कोई बुद्धि प्रयोग का विषय नहीं है। वह तो आपके समग्र ढांचे के ऊपर उठने का विधान है। हाँ, ध्यान में दखल अंदाजी करने वाली बुद्धि को समझाने के लिए कभी कभी बौद्धिक दृष्टांतों की आवश्यकता लगती है। वास्तव में ध्यान तो बुद्धि के पार है। ध्यान है मन का अदृश्य होना।

ध्यान वाणी एवं दृष्टि का गहन मौन है। ध्यान परमात्मा का स्पर्श है और स्वयं का गहन सानिध्य।

श्वास के मुड़ने के कुछ तटस्थ स्थान हैं। जहाँ से गुजरते ही आपकी तटस्थता की क्षमता बढ़ेगी। तटस्थ किसे कहते हैं, पता है? धूँआधार बारिश में, नदी में आती हुई बाढ़ में कई चीजें जल प्रवाह में खिंची हुई आती हैं, जाती हैं, बहुत सारी चीजें नदी अपने किनारे पर छोड़ती हुई बह जाती है। तट पर खड़ी हुई भीड़ में से बहुत से लोग उस प्रवाह के कूड़े करकट में से कुछ न कुछ ढूँढते रहते हैं। परंतु वह व्यक्ति वास्तव में नदी के तट पर सही अर्थ में तटस्थ है, जो तट पर खड़ा हुआ होने पर भी आती जाती चीजों को भी साक्षी भाव से देखता रहता है। न उन चीजों में उसका कोई रस है, न छूता है उन चीजों को, ना ही लालाईत है उनमें से कुछ पा लेने को। वह केवल देखना रहता है प्रवाह के स्वरूप को।

प्रिय साधको!

दो श्वासों के मोड़ बिन्दु को देखते देखते आप हो जाएंगे तटस्थ। फिर विचार प्रवाह में खिंचकर आते जाते रहने वाला कचरा आपको आकर्षित नहीं कर पाएगा। वह बिन्दु सर्वसाक्षी है, और वही शिवत्व का मोड़ है। वह बिन्दु धीरे धीरे विचार प्रवाह को शांत और स्वच्छ कर

देगा।

कम्प्यूटर का विन्डो जैसे एक तटस्थ विन्डो है, वह न कुछ करता है, ना कुछ करना है वहाँ, फिर भी अनिवार्य है आगे विकसित होने के लिए। इसी तरह श्वास के बिन्दु भी अनिवार्य हैं जीवन के आंतरिक विकास के लिए।

वहाँ एक शुद्ध अस्तित्व काम करता है। जिसका संबंध ना सॉफ्टवेयर से है ना हार्डवेयर से, वह वहाँ है। जिसकी उपस्थिति मात्र से आपकी मदद होती है। वह परमात्मा का स्थान है, वह साक्षी रहकर भी सूक्ष्म संचालन करता है।

प्रिय साधको !

हमारा शरीर एक सर्वश्रेष्ठ यंत्र रचना है। परंतु मनुष्य को उसका बोध नहीं है। पूरा मनुष्य देह एक स्वसंचालित कोम्प्यूटर है।

आज के मनुष्य ने कोम्प्यूटर बनाया। परंतु कोम्प्यूटर मनुष्य नहीं बना सकता। वह ज्यादा से ज्यादा रोबोट बना पाएगा, इंसान नहीं। मनुष्य ने हजारों सॉफ्टवेयर बना लिए परंतु अपने शरीर रूपी कोम्प्यूटर को ढंग से नहीं जाना। अपने शरीर रूपी कोम्प्यूटर को पूर्ण रूप से जानने के लिए दो मार्ग हैं – ध्यान और विज्ञान। परंतु मैं मेरे अनुभव से कहती हूँ कि ध्यान के बिना वैज्ञानिक छानबीन हमेशा अधूरी रहेगी। ध्यान के द्वारा भीतर का जो सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त होता है वही सही ज्ञान है।

हमारे भीतर भी हार्डवेयर, सॉफ्टवेयर, हार्डडिस्क, मदरबोर्ड..... सबकुछ है। मैं कहती हूँ कि बाहरी यंत्रों और तंत्रों की खोज मनुष्य की शरीर रचना के आधार का अभ्यास करके ही संभव हो पाई है।

आपका कोम्प्यूटर तो दो चार कॉर्ड से चल जाते हैं परंतु शरीर की तो साढ़े तीन करोड़ नाड़ियाँ हैं जिनमें से तीन प्रमुख हैं। जिन्हें इडा पिंगला और सुषुम्णा कहते हैं। जो शरीर के सात करोड़ कोषों को अनुशासित करती हैं। शरीर के नौ विन्डों हैं हरेक स्थान पर एक मोड़ है। वहाँ से लगातार कुछ बाहर जाता है और कुछ भीतर आता है। उन सभी मोड़ों पर ध्यान करते ही आपकी चेतना केन्द्रीभूत होती है। वहाँ आप अदृश्य हो जाते हो और सिर्फ चैतन्य बचता है। वही मुक्ति के क्षण हैं।

मनुष्य के सोने और जागने के समय में श्वास और प्रश्वास के क्षण, मौन और वाणी के क्षण, दृश्य और अदृश्य के क्षण, शब्द और शांति के क्षण, स्पर्श और अस्पर्श के क्षण, संग और निःसंग के क्षण में एक स्वचालित तंत्र काम करता है; वही है तटस्थ बिन्दु।

मन का स्वभाव है कि मस्तिष्क के स्क्रीन पर वह वॉलपेपर बदलता रहता है। परंतु ध्यान में उतरते ही स्क्रीन स्पष्ट, साफ और दृश्यहीन हो जाता है। यह अत्यंत जरूरी है निर्विकल्प स्थिति तक पहुंचने के लिए।

अ-ध्यानी मनुष्य निरर्थक कर्म और विचारों में इतना प्रवृत्त रहता है कि उसके भीतर के कोम्प्यूटर की मेमरी कभी कभी जंक हो जाती है। उसका कोम्प्यूटर इतना भर जाता है कि दिमाग थका हुआ महसूस करता है। तब आदमी कहता है कि मेरा दिमाग काम नहीं कर रहा है।

ऐसा क्यों ? क्योंकि जिन्दगी की कुछ बातें क्षणिक होती हैं। उसे कुछ क्षणों के बाद तुरंत भूल जानी होती है। परंतु अ-ध्यानी मनुष्य उसे भूल नहीं सकता। परिणामरूप उसका मस्तिष्क थक जाता है। उसे तनाव, चिंता, अर्धपागलपन, डिप्रेशन आदि कुछ भी कह लो।

मैं कहती हूँ कि जिन्दगी में कुछ टेम्परेरी फाइलें बनती हैं, फिर उनका निकाल कर देना चाहिए। मस्तिष्क के कोम्प्यूटर में टाइम टू टाइम डीफ्रेगमंटेशन करना भी सीख लो, वह एक व्यवस्था है, जो ध्यान के द्वारा सम्पन्न हो सकती है। क्षणिक बातें जो घट गई सो घट गई अब बार बार उसका स्मरण करने की या स्मरण में रखने की आवश्यकता नहीं है। अनावश्यक चीजों को उड़ाना सीखो अपने मस्तिष्क के कोम्प्यूटर में से।

मस्तिष्क में भरी हुई निरर्थक बातों को उड़ाने का इल्म है ध्यान। ध्यान बेकार बातों को नष्ट कर देगा और आपको नई ताजगी, ऊर्जा और आनंद देगा। परंतु आपको बैठना तो पड़ेगा स्थिर होकर !

जापान में एक खास ध्यान विधि विकसित हुई है, वह बौद्ध मार्ग से ही है। जिसका नाम है, ज़ाज़ेन। ज़ाज़ेन का अर्थ है सिर्फ बैठना, कुछ भी नहीं करना। परंतु मुझे यह अर्थ अधूरा लग रहा है।

केवल शरीर से कुछ न करना ऐसा नहीं परंतु मैं कहती हूँ कि मन, शरीर और बुद्धि के द्वारा संपूर्ण अक्रिय हो जाना। साधक के जीवन में जब ऐसा होगा तभी ज़ाज़ेन विधि पूर्णता को प्राप्त करेगी।

आपने विपश्यना ध्यान विधि का नाम सुना होगा, यह और क्या है ! एक अर्थ में वो ज़ाज़ेन ही है। चुपचाप बैठकर देखते रहो....। क्या देखना है ? श्वास के भिन्न भिन्न मुड़ाव के बिन्दुओं में से किसी भी एक को देखकर, उसे पकड़कर, उससे तदात्म्य साधकर आप पहुंच जायेंगे।

विपश्यना विधि में आंख पर पट्टी ही बांध देते हैं। तब बेशक यही सिद्ध होता है कि आँखों से कुछ नहीं देखना है, जो देखना है वह



सूक्ष्म में देखना है। श्वास को देखना है, भीतर देखना है, उस तटस्थ बिन्दु को देखना है। खैर, विपश्यना की बात कभी बाद में करेंगे।

प्रिय साधको !

अभी जो विधि मैं समझा रही हूँ उसमें श्वास जहाँ मोड़ लेता है वहाँ ही वह सार्थक होता है। उस मोड़ के सूक्ष्म बिन्दु को देखते रहो।

जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य को क्रियाशील रहने का अभ्यास हो गया है। परंतु जब अक्रिया में प्रवेश की बात आती है। तब वह घबरा जाता है, ऊब जाता है, भाग जाता है, ध्यान है अक्रिया का विश्व। यहाँ डरने से या ऊबने से नहीं चलेगा।

श्वास की प्रक्रिया के साथ तो एक बार मनुष्य चल भी लेता है परंतु श्वास के मुड़ने के बिन्दु पर ध्यान भंग हो जाने की संभावना है। क्योंकि उसी स्थान पर दिशा बदलती है। अगर मनुष्य ने उस स्थान पर स्थिर होना सीख लिया तो वह अपने भीतर ही एक नई दिशा प्राप्त कर लेगा।

ध्यान संदर्भ के कुछ विशेष अनुभव के कारण ही मैंने ध्यान विधि के मेरे ग्रंथों का नाम दिया है – ध्यान: एक नई दिशा।

दशो दिशाओं से यह दिशा भिन्न है। ध्यान कभी बाहर की दिशाओं में भटकने से नहीं मिलेगा। इसके लिए आपके अपने भीतर के सूक्ष्म जगत में झांकना पड़ेगा।

विश्व के सभी तीर्थ किसी न किसी दिशा में हैं। परंतु परम ध्यान तीर्थ आपके भीतर है। वह एक नई, अंजान और विशिष्ट दिशा है। मनुष्य का स्वभाव है, अंजान और नए विषयों से डरकर चलना। परंतु मैं कहती हूँ कि ध्यान तो आपको भयमुक्त कर देगा। यह तीर्थ आपसे अति निकट है। भटकना बंद करो। और मुड़ जाओ इस नूतन दिशा की ओर।

जैसे हिन्दी में मोड़ शब्द है, वैसे ही अंग्रेजी में भी मोड शब्द है। दोनों एक दूसरे से बहुत करीब लगते हैं। शब्दकोष में समानार्थ नहीं मिलेगा। परंतु मेरे अनुभव से ये एक दूसरे के बहुत करीब हैं। मेरी बात को प्रेक्टीकली समझेंगे तो दोनों शब्दों में ज्यादा फर्क नहीं है।

उचित मोड़ ही इच्छित परिणाम ला सकता है। फिर वह मोड़ मोबाईल का हो, ए.सी. का हो, वाशिंग मशीन का हो, ओवन का हो, यात्रा का हो, या स्वयं का। गलत मोड़ अराजकता पैदा कर सकता है। जीवन एक ओटोमोड के सिवाय क्या है? गर्भ से दुनिया की ओर, बचपन से जवानी की ओर, जवानी से बुढ़ापे की ओर, बुढ़ापे से मृत्यु की ओर .....। यहाँ मोड़ भी है और मोड भी है।

खैर, प्रिय साधको !

श्वसन विधि कहती है कि शरीर के भीतर और बाहर श्वास के आवागमन के क्षण, वह जहाँ मुड़ता है उन बिन्दुओं पर ध्यान करो।

अब याद रहे आप जब उस बिन्दु पर स्थिर हो गए तो फिर “आप” कौन हो ये जरा समझने जैसा है। आप तो हो गए उस तटस्थ बिन्दु पर स्थिर, तब आप तो कहीं रहे ही नहीं !

आपकी स्थूल मौजूदगी होने पर भी आप प्रवेश कर चुके हो सूक्ष्म में। उस वक्त अगर आप श्वसन क्रिया को जीवन कहेंगे, तो आप मृत्यु हैं। परंतु एक अर्थ में वह महामृत्यु है। जिन्दा ही मोक्ष का अनुभव है।

श्वसन क्रिया आगर प्राण है, वही जीवन है, वही परमात्मा है तो आप केवल मिट्टी हैं। तो जान लो अपने शरीर की औकात को ! और मिट्टी को मिट्टी समझकर मुक्त हो जाओ उसके मोह से।

अगर आप उस बिन्दु पर अहेसास कर रहे हो कि श्वसन तो एकमात्र क्रिया है, आप ही सर्वस्व हो, भीतर के प्राणबिन्दु ही बाहर के श्वास का आधार है। तो वह भी परम सत्य है। उस बिन्दु पर आपको अपनी अपार क्षमता का साक्षात्कार हो जाए। यह तो ध्यान की सार्थकता है।

श्वास के प्रति लक्ष्य देने से मन ठहर जाता है। जब जब उस श्वास के मोड़ बिन्दु पर मन की गति भी ठहरेगी तब उसकी चंचलता खत्म हो जाएगी। मन की अ-चलता में उसकी मृत्यु है और उसकी चंचलता में उसका जीवन है।

प्रिय साधको !

किसी भी मशीन को गौर से देखो, उसके मेकेनिज्म को ध्यान से देखो, फिर वह भीतर का हो या बाहर का। मशीन के डिब्बे को और उसके यंत्रों की क्रियान्वितता को भिन्न भिन्न रूप से देखो। शरीर मशीन का खाका है, भीतर की सक्रियता परमात्मा है। ध्यान से जान लो उन मोड़ बिन्दुओं को कि कहाँ तक शरीर का कार्य है और कहाँ से परमात्मा सक्रिय हो रहे हैं। यह जानना ही ध्यान है। इस विधि में से गुजरते गुजरता श्वास के मुड़ने के साथ साथ आपकी दिशा भी बदल जाएगी और वह दिशा अतिपावन, दिव्य और सही है।

# रिक्त-पूर्ण अंतर ध्यान

प्रिय साधको !

श्वास और उच्छ्वास की गति के उपरांत भीतर एक क्षण ऐसा आता है कि जब श्वास न भीतर जाती है, न भीतर से बाहर आती है। उसे हम कह सकते हैं, दोनों प्रक्रियाओं का विलीनीकरण।

श्वसन क्रिया में एक क्षण ऐसा आता है कि दोनों श्वास परस्पर में विलीन हो जाते हैं। उसे आप श्वास का शमन बिन्दु कह सकते हैं। वैसे तो श्वास एक संपूर्ण प्रक्रिया है, उसे भीतर की या बाहर की श्वास ऐसा भिन्न भिन्न नहीं कर सकते। वह तो श्वसन क्रिया अथवा प्राणन क्रिया का एक वर्तुल है। आधा वर्तुल श्वास लेने से बनता है और आधा बाहर निकलने से। जब श्वास का वर्तुल पूर्ण होता है तभी वह श्वास जीवनदायक बन सकता है।

वह एक प्राकृतिक चक्र है। उसका पूरा होना ही जीवन है। थोड़ा भी अधूरा छूटना यह अधूरा जीवन है और उस चक्र का आधा रहना मृत्यु।

किसी भी चक्र थोड़ा भी अधूरा घूमेगा या विचलित होता हुआ घूमेगा तो गाड़ी को नुकसान हो सकता है। संतुलन टूट सकता है।

मनुष्य छोटी सी सायकल या मोटरसायकल के चक्र की योग्य गति के प्रति ध्यान देता है उन चक्रों की देखभाल करता है। ट्यूब टायर बदलता है, व्हील बेलेन्सिंग और एलाइन्मेंट समय समय पर कराता है परंतु स्वयं के चक्र के प्रति अजाग्रत है, कैसी करुणा की बात है यह ! मनुष्य को उसके ही तंत्र के बारे में उसे जगाना पड़ता है, कुछ सिखाना पड़ता है, उस सीखने और जागने की विधि को मैं ध्यान कहती हूँ। प्रिय साधको !

जरा ध्यान दीजिए, मनुष्य के भीतर श्वास का एक पूरा चक्र चल रहा है। वह चक्र वायु के बल से क्रियावित रहता है। वहाँ वायु अन्न, और ईंधन जैसा काम करता है।

उस वर्तुल का सदंतर बना रहना जीवन के लिए अनिवार्य है। परंतु भीतर एक ऐसा सूक्ष्म स्थान भी है कि जिसे आपको समझाने के लिए मैं गाड़ी में रिजर्व में रहने वाला पेट्रोल कहूँगी। वह स्थान परमात्मा का स्थान है, परम शक्ति का स्थान है। रिजर्व में रहे हुए परमात्मा से गाड़ी को स्टार्ट मिलता है, सेल्फ लग सकता है, एक बार गाड़ी चालू हो जाती है। यह रिजर्व स्थान सभी जीवों में है, वही महाप्राण है। और श्वसन क्रिया के द्वारा आप वातावरण में से प्राणवायु को प्राप्त करके जीवन की गाड़ी को लंबा चला सकते हो।

अब जरा ध्यान से समझिए, श्वास और उच्छ्वास दोनों की गति में एक ऐसा मिलन बिन्दु आता है कि जहाँ दोनों वायु परस्पर में विलीन हो जाती है। और शरीर की वायु की मांग का उस क्षण में शमन हो जाता है।

उस मिलन बिन्दु को जान लेना ही परम उपलब्धि है।

परंतु मनुष्य का यह चक्र जरा सा अधूरा ही रह जाता है। उस चक्र को पूरा करने में मनुष्य ही बाधा रूप बनता है। खुद के हित में वह खुद ही विक्षेप बनता है, खुद के लय को वह खुद तोड़ता है।

मनुष्य का श्वसन वर्तुल पूर्ण हो रहा है कि अधूरा है, इसका प्रमाण क्या ?

मैं कहती हूँ कि जो मनुष्य श्वसन क्रिया वर्तुल से पूर्ण रूप से गुजरता है उसको ध्यान से देखना। पूर्ण रूप से श्वसन वर्तुल में से गुजरने वाले का पेट हिलता है और जिसका यह वर्तुल अधूरा रह जाता है उसकी केवल छाती तक संचलन होता है। यह प्रमाण है अधूरे वर्तुल और पूरे वर्तुल का।

ऐसा क्यों होता है ? उसके कुछ कारण हैं। श्वसन एक शांत और गहन प्रक्रिया है। जो मनुष्य शांत होगा उसकी श्वसन प्रक्रिया भी गहन और शांत रूप से हो सकेगी। गहन और शांत श्वसन क्रिया सफलता को आपके निकट ला सकती है।

आपने शायद चीन में प्रचलित आत्मसुरक्षा की एक विधि वू-शू का नाम सुना होगा। वू-शू की कई शाखा प्रशाखाओं में से एक प्रकार है ताइचे। ताइचे के साधक विद्यार्थी को उसके मास्टर सबसे पहले श्वसन वर्तुल पूर्ण हो इस प्रकार से श्वास लेने के लिए प्रशिक्षित करते हैं अर्थात् वहाँ वायु को नाभी की गहराई तक पूरा पूरा विस्तारित होने की विधि बताते हैं, सिखाते हैं और प्रयोग करते हैं। उस विधि में शरीर को वर्मअप नहीं करना है, शांति से जी भरके श्वास लेने होते हैं।

श्वास का पूर्ण वर्तुल मनुष्य को पूर्ण बल प्रदान करता है और आत्मविश्वास जगाता है। यह वर्तुल मनुष्य में स्थिरत्व पैदा करता है। स्थिरत्व और शांति आत्मरक्षा करती है, अशांति हमला करती है।

आज का मनुष्य लालसाओं के कारण अंधी गलियों में भटक रहा है। चित्त से विचलित है, मन से अर्धपागल जैसा, या थोड़ा विकृत है, शरीर से अति चंचल है। और बुद्धि से स्वार्थी अथवा जड़ है।

अंधी दौड़ की वजह से मनुष्य ने अपने भीतरी और बाहरी ढांचे को इतना विक्षिप्त कर दिया है कि उसके शरीर की कुदरती व्यवस्थाओं का लय भी टूट गया है। ज्यादातर लोगों की स्थिति ऐसी है।

दुनिया के ज्यादातर लोग ऊपर ऊपर से जी रहे हैं। उनके जीने में कहीं भी गहराई नहीं है, उनकी इस वृत्ति का नकारात्मक असर उसके श्वास ऊपर सबसे ज्यादा पड़ता है।

ये ऊपर ऊपर से जीने के स्वभाव की वजह से वह श्वास भी ऊपर ऊपर से ले रहा है। उसके नाभी केन्द्र तक तो बची-खुची वायु ही पहुंचती है। क्योंकि वह दूसरे के साथ भी अधूरा है और खुद के साथ भी अधूरा। कुछ भी पूर्ण रूप से करने की कला ही नहीं जानी है उसने। वह पूरा भरता ही नहीं है प्राण को स्वयं के भीतर।

साधु संत कहते हैं कि आज लोगों में काम वासना बढ़ गई है। वे टी.वी. को दोष देते हैं परंतु उसका संपूर्ण दोष टी.वी. पर डालना यह नासमझी है। प्राण परमात्मा है, जो प्राणवायु से प्राप्त होते हैं। वह प्राण मनुष्य के अधूरे श्वसन चक्र की आदत के कारण नाभी और मूलाधार चक्र तक तो पूर्ण रूप से पहुंचते ही नहीं। अगर वहाँ तक पूर्ण रूप से पहुंचे, तो शांति बढ़ेगी। शांति बढ़ने के कारण विषय वासना की इच्छा कम हो जाएगी और इन्द्रियातित आनंद बढ़ जाएगा।

श्वास को भीतर तक पहुँचाने में भी जाग्रति चाहिए। प्रारंभ में ज्यादा सजगता चाहिए। धीरे धीरे वह अभ्यास बन जाएगा और बाद में स्वभाव।

जब शरीर के निम्न भाग के गहन चक्रों तक पूरा पूरा प्राणवायु पहुँचेगा तो उनसे संलग्न अंगों को तृप्ति मिलेगी।

याद रहे, श्वास सूक्ष्म है। सूक्ष्म का परिणाम सूक्ष्म आता है और स्थूल का परिणाम स्थूल। आज के मनुष्य ने सूक्ष्म का अभ्यास छोड़ दिया है, वह भीतर से खालीपन महसूस करता है। उस खालीपन को भरने के लिए वह ज्यादा से ज्यादा स्वादिष्ट भोजन करता जाता है। मैं स्वाद के विरोध में नहीं हूँ परंतु बाज़ारू भोजन का आज के युग में अतिरेक हो गया है।

जब जातीय वृत्ति से संलग्न अंगों को पूरा पूरा प्राणवायु नहीं मिलता है तब वे केवल स्थूल से पुष्ट होते रहते हैं। ऐसे लोगों की पूरी ऊर्जा अन्न के द्वारा केवल पेट और उसके नीचे के अंगों की तरफ ही बहती रहेगी। और फिर वृत्तियाँ और इन्द्रियाँ भी स्थूल की ओर ही भटकती रहेंगी।

प्रिय साधको !

यह एक परम प्राकृतिक सत्य है। आपको पता है ? साधु, संत, सर्जक, चिंतक, ध्यानी ज्यादा भोजन नहीं लेते हैं। भीतर से शांत होने की वजह से उसकी श्वसन क्रिया भी स्वाभाविक और पूर्ण होती है। उनके भीतर के सभी चक्र परितृप्त होते हैं गहरी श्वासों के द्वारा। इसलिए उनको साधारण व्यक्ति की तरह अतिशय भोजन की आवश्यकता नहीं रहती। और साधारण व्यक्ति की भांति विषय वासना को पूरी करने के सतत लिए स्थूल शरीर की मांग भी नहीं रहती।

पुराण कथाओं में मैंने अनेक बार पढ़ा है कि भारत के अनेक ऋषि कुछ समय तक संसार में रहने के बाद फिर पत्नी से आज्ञा ले लेते थे साधनापूर्ण जीवन जीने के लिए। वे जल्दी संसार भाव से निवृत्त हो जाते थे सामान्य मनुष्य की तुलना में।

ऐसा क्यों ? क्योंकि ध्यान उसके जीवन का और नित्य कर्म का एक भाग था। ध्यान के द्वारा शांति का गहन अनुभव और श्वसन ढंग का सही होने से भीतर से एक ऐसी तृप्ति घटती थी कि फिर बाहर से बहुत ज्यादा पा लेने की वृत्ति आ प्रवृत्ति से निवृत्त हो जाते थे। वे शारीरिक दमन नहीं कर रहे थे, परंतु सजगता, आत्माभ्यास और ध्यान के द्वारा उनकी वृत्तियों का महद अंश से शमन हो जाता था। भीतर की तृप्ति और प्राण की तृप्ति बाहर की माँग को कम कर देते हैं। वही सच्चा आध्यात्मिक जीवन है। कोई नियम या सिद्धांत थोपने से, या धार्मिक दबाव डालने से, या पाप का भय दिखाकर मनुष्य को ऐसा जीवन नहीं दिया जा सकता। आध्यात्मिक जीवन कहीं बाहर से नहीं आता है, ये तो आपके पास है ही। मात्र आंतरिक अनुभव से उसे जानकर समझ लेना है। और उसके अनुसार जीने का आरंभ करना है।

अब आईए विधि की ओर। श्वास और उच्छ्वास आपके भीतर के एक बिन्दु पर परस्पर में सम्मिलित हो जाते हैं। उस बिन्दु को खोज लीजिए, वह स्थान ऊर्जा से पूर्ण भी है और ऊर्जा से रिक्त भी है।

इस बात को समझने में आपको जरा कठिनाई हो सकती है। क्योंकि शब्दों में विरोधाभास दिखाई दे रहा है। मैं कहती हूँ कि यहाँ विरोधाभास होते हुए भी नहीं है। यह मात्र आभासी विरोधाभास है।

ऊर्जापूर्ण स्थान इसलिए कहा है कि वह एक कुदरती रिजर्व कोटा है। जो वायु जन्म से प्राण के रूप में लेकर हम पृथ्वी पर आए हैं। ऊर्जा रहित इसलिए है कि वह रिजर्व कोटा खत्म न हो इसलिए परमात्मा ने विशेष ईंधन प्राप्त करने की व्यवस्था मनुष्य के भीतर और बाहर की है।

श्वास प्रश्वास यह मनुष्य का सर्वप्रथम पुरुषार्थ है पृथ्वी पर आने के साथ का। जिससे वह उसकी जिम्मेदारी भी निभाए, उसके श्वास प्रश्वास की प्रक्रिया से रिजर्व कोटा वाला स्थान पुष्ट भी होता रहे। इस स्थिति के लिए सदाशिव भरितास्थिति शब्द का प्रयोग करते हैं।

कुदरत की ओर से मिला हुआ प्राण का रिजर्व कोटा कुदरत ने दी हुई श्वसन क्रिया की क्षमता के कारण ही, बाहर से ली हुई वायु से पुष्ट होता रहता है।

इस तरह से जिस क्षण भीतर के केन्द्र को पर्याप्त मात्रा में वायु के द्वारा ऊर्जा नहीं मिलती तब वह ऊर्जा अल्प हो जाने के बावजूद भी ऊर्जा पुरित स्थान हैं।

ध्यान विधि कहती है कि आप उस स्थान को छू लो। आप जीवनभर श्वास लेते रहते हो परंतु अजाग्रति की वजह से उस परम केन्द्र के सानिध्य में कभी नहीं आते। मैं यहाँ सीधे संपर्क की बात कर रही हूँ। सजग सानिध्य की बात कर रही हूँ। रामायण में एक कथा आती है, कुछ बरसों से हनुमान का संपर्क राम से छूट गया था। उसका विस्मरण भी हो गया था। फिर तो हनुमान जी सुग्रीव का सचिव पद संभाल रहे थे। सुग्रीव बालि से भयभीत था। इसीलिए किष्किंधा की ओर किसी भी व्यक्ति को आता हुआ देखकर वह सजग हो जाते थे। और सदा शंकित रहते थे कि आने वाला व्यक्ति बालि के द्वारा भेजे हुए कोई भेदिया तो नहीं हैं!

वनवास के दौरान राम-लक्ष्मण किष्किंधा के निकट आ रहे थे। उन्हें दूर से देखकर सुग्रीव का मन शंका से घिर गया, उसने विचक्षण मति के अंजनिपुत्र को कहा कि आप उन तपस्वियों के पास जाओ और भेद जानो कि वे कौन हैं? अंजनि सुत तो राम के परम प्रेमी थे परंतु पुराने रिश्ते के विस्मरण के कारण, लंबे अरसे के फासले के कारण वे अपने प्रिय और परिचित व्यक्ति को नहीं पहचान पाए। फिर बात करते करते पता चला कि ये तो श्रीराम हैं!

प्रत्यभिज्ञा होते ही पवनपुत्र की सोच तुरंत बदल गई, उसका व्यवहार बदल गया, भाव बदल गया, संभावनाएं बदल गईं, एकाएक क्षमता और आत्मविश्वास बढ़ गया और पूरा इतिहास बदल दिया हनुमान ने। योग्य केन्द्र से परिचय होने का यह है प्रभाव।

हम भी भूल चुके हैं हमारे मूल केन्द्र को, मूल स्रोत को, स्वयं के साथ के असल रिश्ते को, परम इष्ट को।

इष्ट का अर्थ होता है इच्छित फल देने वाला, अपना चाहा हुआ, अपना प्रिय, अपना कल्याण करने वाला।

वह इष्ट हमारे भीतर ही है। मनुष्य ने हनुमान की तरह उसका विस्मरण कर दिया है। एक बार उसका पुनः परिचय हो जाने के बाद आपकी क्षमताएँ और अद्भुत संभावनाएँ जाग उठेंगी। आपका पूरा लक्ष्य बदल जाएगा।

ध्यान विधि कहती है कि आप उस ऊर्जा रहित तदपि ऊर्जा पुरित स्थान का पूर्ण सभानता से स्पर्श करो। यह सभानता कब आएगी। जब आप सब जगह से अपनी चेतना को खींचकर उसे श्वसन क्रिया पर केन्द्रित करेंगे तब।

वह स्थान वैसे तो अति सूक्ष्म है, फिर भी जीवन का आधार है। उस स्थान की वजह से श्वसन क्रिया सार्थक होती है। वही स्थान उस क्रिया का जन्मदाता है और जीवनदाता भी। उस स्थान में सर्वप्रथम शरीर के स्थूल अवयवों को जैसे कि फेफड़, हृदय, श्वास नलिका, और नासिका सहित रोम रोम में प्राण फूंकती है। जिससे पूरा तंत्र कार्य करने लगा और मनुष्य लेने लगा जीवन का आनंद। फिर भी करुणा की बात यह है कि मनुष्य को सर्वप्रथम श्वसन क्षमता बक्ष्मने वाले केन्द्र को वह भूल ही गया।

यह ध्यान विधि आपको केन्द्र की ओर लौटा रही है। उसका पुनर्स्मरण और पुनर्परिचय कराती है। परिचय होते ही आप बदल जाएंगे। आपका असल रूप स्पष्ट हो जाएगा। हनुमान भी पहले ब्राह्मण का भेष बनाकर गए थे परंतु राम से परिचय होते ही मुखौटा गिर गया। स्वयं का बल जाग जाने के बाद ब्राह्मण के वेष की जरूरत नहीं।

परम स्रोत का परिचय होते ही भेदनीति, राजनीति, कूटनीति, जाति-पांति, ऊंच-नीच और ओढ़ी हुई सारी बनावटी सभ्यताएं गिर पड़ती हैं।

फिर बाकी रहता है शुद्ध चैतन्य। फिर तो सहजता, प्रसन्नता, और निरंतर बोध बना रहता है। वही है संबोधी, वही है समापत्ती, वही है समाधि, वही है परम ज्ञान और महामुक्ति।

श्वसन क्रिया में तल्लीन होकर गहन अभ्यास के बाद प्राप्त कर लो उस स्थान को जहाँ मूल ऊर्जा का और समग्र ऊर्जा तंत्र के महास्रोत का उदगम बिन्दु है, जो शरीर रूपी यंत्र में सक्रिय है।



प्रिय साधको !

श्वासरूप बनते बनते एक क्षण ऐसा आएगा कि आप अचानक छू लेंगे उस बिन्दु को, उस स्रोत को वह आ जाएगा आपकी पकड़ में। उससे परिचित होते ही उसमें विलीन होने लगेंगे। उस क्षण में जो अनुभूति होती है उसका वर्णन नहीं हो सकता। क्यों ?

क्योंकि, फिर कौन रहेगा वर्णन करने वाला ! बूंद सागर में मिल गई, बची सिर्फ विराटता, स्वतंत्रता, गहनता का अनुभव, परम मौन और शांति। वही है शिवावस्था। वही है ब्रह्मभाव।

## धरणा - ४३

### अंतरबहिर सहज कुंभक ध्यान

प्रिय साधको !

लगता है कि सदाशिव ने श्वसन क्रियाओं के द्वारा जितना आध्यात्मिक अनुभव किया है इतना शायद पृथ्वी के किसी भी मनुष्य ने नहीं किया।

यहाँ शिव हमको श्वसन पर आधारित एक विशिष्ट विधि की ओर ले जा रहे हैं। यह विधि भी आपको एक खास बिन्दु पर ध्यान करना सिखाती है। श्वास जब पूर्ण रूप से बाहर निकलकर क्षणभर के लिए रुकता है और पूर्ण रूप से भीतर आकर क्षणभर के लिए वहाँ भी रुकता है उस विराम बिन्दु पर ध्यान करो।

प्रिय साधको !

आपको प्रश्न उठ सकता है कि इससे क्या होगा ? अनुभव के आधार पर मैं कह सकती हूँ कि इससे तो बहुत कुछ घट सकता है।

श्वास जब पूर्ण रूप से बाहर निकलकर क्षणभर रुकता है तब शरीर के भीतर की सारी अशुद्धियाँ आपका श्वासन तंत्र उच्छ्वास के रूप में बाहर फेंक देता है। उस क्षण में आप तनावमुक्ति, शांति और क्षणिक विराम का अनुभव करते हैं। जैसे स्नान करने के बाद आप विशेष फुर्ती और प्रसन्नता का अनुभव करते हैं वैसे। ऐसा क्यों होता है ? क्योंकि शरीर के भीतर चिपकी हुई सारी अशुद्धियाँ स्नान से धुल गईं। जिससे आपको अच्छा लगा, प्रसन्नता बढ़ी, नई ऊर्जा का अनुभव हुआ, रक्त प्रवाह का वेग ज्यादा अच्छा हुआ।

गुजराती में एक शब्द है “हा...श”। यह “हाश” शब्द मनुष्य की भीतरी शांति को व्यक्त करता है। वह अंतरमन से प्रगटा हुआ शब्द है। उसका विशेष अर्थ नहीं है, फिर भी अर्थ अनुभव में बहता है।

जब मन को अच्छा लगता है, मन का भार हल्का होता है, तनावमुक्ति का अनुभव होता है, या शुद्धि का अनुभव होता है तब मनुष्य के मुख में से “हाश” शब्द निकल जाता है।

जब शरीर के बाहर चिपकी हुई अशुद्धियाँ स्नान के द्वारा धुल जाने से अगर “हाश” का अनुभव होता है तो सोचो जब श्वास पूर्ण रूप से बाहर निकलती है और एक क्षण के लिए बाहर ठहरती है तब तो शरीर के भीतर की संपूर्ण अशुद्धियाँ बाहर बह जाती हैं। तब कितनी बड़ी “हाश” का अनुभव होता होगा आपको ! जरा सोचिए।

वह एक परम शांति का क्षण है, तनाव मुक्ति का क्षण है। शरीर के किसी भी स्थान में से अशुद्धियाँ बाहर निकल जाने से अथवा मनोभार का विरेचन हो जाने से हाश का अनुभव होता है। यह भले क्षणिक परंतु परम विराम का क्षण है; शुद्धि का क्षणिक अवसर है।

ध्यान विधि कहती है कि उतर जाओ उस क्षण में, हो जाओ कुंभक रूप, कुंभक ही बन जाओ। कुंभक का अर्थ है श्वास का न भीतर आना, ना बाहर जाना परंतु क्षणभर के लिए कहीं स्थिर हो जाना। श्वास के इस क्षणभर के ठहराव को योग शास्त्र कुंभक कहते हैं।

प्रिय साधको !

विधि कहती है कि जहाँ श्वास ठहरती है वहाँ क्षणभर के लिए आप भी ठहर जाओ। आपकी सारी चिंताएं तनाव, मन, बुद्धि और अहंकार का खेल विसर्जित हो जाएगा क्षणभर के लिए।

मन, बुद्धि और अहंकार का तिरोहित हो जाना ही मुक्ति का क्षण है। अहंकार जल्दी से अदृश्य नहीं हो सकता है। किसी न किसी रूप में प्रगट होते रहने से ही वह पुष्ट रहता है। अहंकार कभी सरल नहीं बन सकता, ना वह स्थिर हो सकता है।

अहंकारी पुरुष को देखना आप ! वह ना हंस सकता है, ना खेल सकता, ना नाच सकता, ना किसीको प्यार से गले लगा सकता, ना झुक सकता। अहंकारी मनुष्य हमेशा अकड़ में रहता है। अहंकारी के चहरे पर आप कोई खास प्रसन्नता या सहजता नहीं देख सकेंगे।

आधुनिक विज्ञान एड्स और कैंसर को महारोग कहते हैं परंतु मैं अहंकार, लोभ और क्रोध को महारोग कहती हूँ। यह ध्यान विधि ऐसी प्रकृति के लोगों को ज्यादा मदद कर पाएगी। परंतु ऐसे लोग तभी लाभ ले पाएंगे इस विधि का, कि जब कम से कम उन्हें बोध हो अपनी असलियत का अपने स्वभाव का।

ज्यादातर लोगों को अपनी कमजोरियों का पता ही नहीं होता और कुछ लोग अपनी कमजोरी का शस्त्र के रूप में उपयोग करते रहते हैं। उसे उन कमजोरियों के साथ जीना ही सलामती लगती है। ऐसे लोगों के लिए कोई उपाय नहीं। लोभी, क्रोधी और अहंकारी पुरुष का मन ज्यादा तनावग्रस्त होता है। क्यों ?

क्योंकि उनके लिए एक तो आज का माहौल तनाव पैदा कर रहा है, दूसरा उन्होंने बढ़ाई हुई अपनी जिम्मेदारियाँ तनाव पैदा कर रही हैं, और तीसरा खुद से परेशान हैं। अपनी प्रकृति के द्वारा। अपने स्वभाव के द्वारा पैदा होते तनाव का क्या करें ?

ऐसे लोग बेचारे हैं। दुनियाँ की नजरों में वे भले कितने भी सफल व्यक्ति दिखाई दे रहे हों फिर भी वे बेचारे हैं। क्योंकि ऐसे लोग तो सहजता से संत के चरण में भी नहीं जा सकते। वहाँ भी वह मान सन्मान और निमंत्रण की अपेक्षा करते हैं। ऐसे लोग किसी ध्यानी आत्मा के पास जाकर निखालसता से स्वीकार भी नहीं कर सकते हैं अपनी कमजोरियों का।

ऐसा क्यों होता है ? क्योंकि उसके आत्मोद्धार के लिए भी उसका अहंकार विघ्नरूप बना रहा है। ऐसे लोग किसी से कुछ जानना भी चाहते हैं, तो भी घुमा फिराकर प्रश्न करते हैं, ताकि खुले न पड़ जाएं।

मेरे पास ध्यान शिबिर में कभी कभी ऐसे लोग आ जाते हैं। वे कुछ जानना तो चाहते हैं मुझसे, प्रश्न तो लिखकर देते हैं परंतु नीचे अपना नाम नहीं लिखते हैं। उसका नाम घोषित हो अर्थात् साबित हो जाए कि वे अज्ञानी हैं यह बात उसके अहंकार को मान्य नहीं होती।

कुछ लोग तो यह भी स्पष्ट लिखते हैं कि मेरा नाम घोषित मत करना। मनुष्य कितना अहंकारी है ! कितना स्वार्थी है ! कि संत से कुछ पाना भी चाहते हैं और दुनियाँ को पता भी नहीं चलना चाहिए कि कौन पा रहा है ? अहंकारी मनुष्य कितना डरपोक होता है ! ऐसे लोग संत के सामने और ध्यानियों के संग में भी डरते हैं। इसलिए दूर ही रहते हैं।

मरते दम तक वे चाहते हैं कि उसका अहंकार अकबंद रहे। और ऐसे लोग भीतर से अक्सर बंद रहते हैं। वह बंदपन का भार भयानक होता है। उन्होंने तय कर लिया होता है कि भले हम कितने भी दुखी हों, परंतु किसीको पता लगना नहीं चाहिए। अहंकार हमेशा मुहरा पहनकर जीता है। ऐसे लोग कहीं भी खुल नहीं सकते।

प्रिय साधको !

ऐसी मिथ्याभिमान की धारणा कोई खुमारी नहीं है ! ऐसे लोग कोई संत नहीं हैं ! सहिष्णु भी नहीं हैं। परंतु उसके अहंकार के स्वीकार नहीं है खुल कर जीना। ऐसे लोगों का अहंकार हर बात में मिथ्या राज रखे जाते हैं।

मैं कहती हूँ कि ऐसे लोगों के लिए यह ध्यान विधि अनिवार्य है।

बुद्ध ने ज्यादा से ज्यादा श्वास की विधियों पर और शून्य आधारित ध्यान विधियों पर जोर दिया था। क्यों ? पता है।

उसके पास कई राजा, महाराजा, राजकुमार, सामंत, मंत्री और प्रधान आते थे शांति प्राप्त करने के लिए। बुद्ध एक प्रमाणिक पुरुष थे, आज के धन प्रेमी बाबाओं की तरह धन के बदले में रेडीमेड आशीर्वाद का कोई स्टॉक नहीं था। बुद्ध के पास सच्चाज्ञानी ऐसे धोखे में न रहता है न किसीको रखता है।

बड़े लोगों का अहंकार बड़ा होता है। वे उन धनाढ्यों को श्वसन क्रिया पर आधारित विधि बता देते थे। बुद्ध बहुत समझदार अवतारी पुरुष थे। लोगों के मन की बात वे बिना बोले समझ लेते थे। वे जानते थे कि अहंकार से भरा मनुष्य आखिर क्या, कैसा और कितना बोल सकता है ? कितना झुक सकता है ? कितना स्वीकार कर सकता है, कितना नहीं ?

ऐसे लोग ज्यादा सत्संग, अनुसरण या आज्ञापालन नहीं कर पाएंगे। हाँ, अगर ध्यान से रूपांतरित हो गए तब कुछ हो सकता है। तब बुद्ध किसी के अहंकार को चोट पहुँचाए बिना सीधा ध्यान विधि का ज्ञान दे देते थे।

जिससे अहंकारी को किसी पर ज्यादा निर्भर न रहना पड़े। किसीको पता न चले कि वह बदल रहा है, किसीको पता नहीं चलना चाहिए कि वह बदलना चाहता है, या उसे स्वयं को बदलने की जरूरत है।

ऐसे लोग चाहते हैं कि उनके अहंकार पर लोगों की नजरों से चोट न पड़े और फिर भी वे बदल जाएं, ऐसा तो सिर्फ ध्यान से ही संभव था क्योंकि ध्यान एकांत में होता है। ध्यान गुप्त बातों को गुप्त रखकर भी आपको रूपांतरित करके किसी गुप्त का अनुभव करा देता है।

वे राजा, महाराजा, युवराज, दीवान आदि कक्षा के लोग बुद्ध की बताई हुई ध्यान विधि में उतरते उतरते बदल जाते थे।

बुद्ध करुणामूर्ति थे, उनका रास्ता ही स्नेह और करुणा का था। इसलिए राजकुमार, राजकुमारियाँ और राजाओं को रूपांतरित करने में उन्हें बड़ी सफलता प्राप्त हुई। उनकी करुणा सूक्ष्म रूप से काम कर गई। क्योंकि अहंकारी को भी प्रेम की जरूरत तो होती है। परंतु वह प्रेम माँग नहीं सकता। ना प्रेम के लिए समर्पित हो सकता है।

ऐसे लोग धन के बल पर विषय वासना तो पूरी कर सकते हैं परंतु नम्रता के अभाव के कारण प्रेम के लिए सदा तड़पते रहते हैं। फिर भी अपने अहंकार को अखंड रहता हुआ देखकर वे संतोष लेते हैं। ज्ञान से तो अच्छे ही रह जाते हैं।

करुणा तो प्रेम से भी सूक्ष्म है। वह बिना माँगे बहती रहती है। पापी और पुण्यवान दोनों की सहायता के लिए करुणा हमेशा तत्पर रहती है। करुणा नम्र और अहंकारी का भेद मिटा देती है। ऐसी करुणा का प्रभाव बहुत गहन रूप से पड़ता है तथाकथित बड़े लोगों के हृदय पर।

ऐसे लोगों को ज्यादा झुके बिना करुणावान संतो के स्वभाव के द्वारा सहज ही मदद मिल जाती है। जैसे वृक्ष बिना माँगे फूल, फल और छांव देता है और नदी जल।

बुद्ध आजीवन मन, वचन और कर्म से कभी भी किसी के साथ कठोर नहीं बन पाए। उनके पास समर्पण की भाषा थी। कटु वचन कहे बिना वह ज्ञानपूर्ण वाणी और अंतर से छोटे छोटे दृष्टान्तों के द्वारा लोगों को अपना कर लेते थे।

बुद्ध की करुणा ने तोड़ दी हजारों हजारों वर्ष पुरानी पंडितों की मोनोपॉली को। पतंजलि के बाद ध्यान के द्वारा भारत उपरांत समग्र एशिया में अगर कोई आध्यात्मिक क्रांति घट गई हो तो ये बुद्ध की करुणा की वजह से घटी है।

यहाँ एक दूसरी बात समझनी भी जरूरी है, मनुष्य के मन में प्रश्न उठ सकता है कि क्या पतंजलि का योग राजा-महाराजाओं की मदद नहीं कर सकता था? हाँ, कर सकता था। परंतु योग समर्पण का मार्ग है और ध्यान तंत्र स्वतंत्रता का मार्ग है। जो मानस समर्पण करने योग्य थे उन्होंने योग में उतरकर बहुत कुछ पा लिया। परंतु राजा महाराजाओं का अहंकार समर्पण कैसे कर सकता! उन राजाओं में से जो सरल थे, वे राजा में से राजऋषि हो गए। त्याग के मार्ग पर योग को आत्मसात कर लिया। परंतु अहंकारियों के लिए तो बुद्ध का प्रेम और करुणा ही काम कर गया।

पतंजलि के साथ दूसरी भी एक तकलीफ थी। पतंजलि के योग में यम, नियम में से गुजरना अनिवार्य था। और राजा-महाराजाओं का अय्याशीपूर्ण और स्वछंद जीवन का यम-नियम के साथ दूर दूर तक कोई रिश्ता नहीं था। ऐसे लोगों का योग मार्ग पर जाना आर्ट्स के विद्यार्थी को सायन्स में डाल देने जैसा था।

सही समय पर बुद्ध ने उनकी मानसिकता को पहचानकर ध्यान कला का एक स्वतंत्र मार्ग दे दिया और हजारों का रूपांतरण घट गया। ध्यान विधियों ने उनके जीवन में यम-नियम को सहज जन्म दे दिया। और उन ध्यान विधियों में प्रमुख दो विधि थीं – शून्य के आधार पर ध्यान और श्वास के आधार पर ध्यान।

प्रिय साधको!

श्वासन तंत्र की प्रत्येक ध्यान विधि पर मन तो अदृश्य हो ही जाता है परंतु खास करके मैं बहिरकुंभक और अंतरकुंभक अर्थात् पूर्ण रूप से श्वास के बाहर निकल जाने के बाद श्वास शरीर के बाहर के किसी अदृश्य स्थान पर तनिक ठहरता है। तब उसके साथ अगर साधक ने भी ठहरना सीख लिया तो क्षण में ही तनावमुक्ति का अनुभव हो जाएगा। शांत मन ज्यादा शांति का अनुभव करेगा और ज्यादा तनावपूर्ण मन ज्यादा विभ्रान्ति का अनुभव करेगा।

ज्यादा अशुद्धियों से भरा हुआ मन लोभी, कामी, क्रोधी या अहंकारी हो सकता है। आप जिसे काम, क्रोध, लोभ कहते हैं, वे केवल मन के साथ चिटकी हुई अशुद्धियाँ हैं। इससे आप मुक्त हो सकते हो।

कोई मनुष्य भला कि बुरा, शुद्ध या अशुद्ध है ही नहीं। उसकी परम चेतना तो परमात्म रूप ही है। केवल प्रकृति की वजह से वह एक दूसरे से थोड़ा भिन्न है। संत और असंत में मात्र स्वभाव का ही फर्क होता है। वस्त्रों के रंग का फर्क कोई ज्यादा मायना नहीं रखता। असंत को संत का भेष पहना दो, या संत के चहरे पर डाकू जैसे दाढ़ी-मूछ लगा दो इससे भीतरी गुणवत्ता में कोई फर्क नहीं पड़ जाएगा। भीतर पड़ी हुई अशुद्धियाँ साफ होते ही असंत संत बन जाता है।

ऋषि वाल्मिकी और अंगुलीमाल का उदाहरण क्या सिखाता है? लूटेरे में से ज्ञानी में रूपांतरित हो जाने की वजह एक ही है, अशुद्धियों का बह जाना। शुद्ध तो भीतर भरी ही है, वह है परमात्मा।

कुछ आवरण कुछ परतें कुछ गंदगी लग गई है ऊपरी स्तर पर। ध्यान उन सारी अशुद्धियों को विसर्जित कर देता है। ध्यान गंगा का

प्रवाह बहा देता है आपके मन के सारे मैल को।

खैर, बाहर क्षणिक रुकी हुई श्वास के साथ आप भी पूर्ण रूप से रुकना सीख लो। आपको शुद्धि का अनुभव होगा, वहाँ आपका स्वभाव रुक जाएगा, जो स्वभाव ऊपर के स्तर का है।

ध्यान में जब मन और बुद्धि रुक जाएंगे तो काम, क्रोध, मद, लोभ, अहं सबकुछ अदृश्य होते जाएंगे। क्योंकि श्वास के उस विराम बिन्दु पर जो शांति का बोध होता है ऐसी शांति काम में, क्रोध में, लोभ में या अहंकार में कभी नहीं मिलती। यह बात आपके लिए अनुभव सिद्ध हो जाएगी।

इसमें आपको कुछ खास करना नहीं है, घटना अपनेआप घटेगी। करना सिर्फ इतना है कि वह परम विशुद्ध घड़ी पर उस शुद्ध क्षण पर जाग्रति के साथ रुकना सीख लो, ठहरना सीख लो। वह एक पूर्ण क्षण है। क्योंकि वहाँ अकारण शांति और विश्रान्ति का अनुभव है। वही सही शांति है, पूर्णता का सही अनुभव है वह। आप उस क्षण में विलीन होते होते स्वयं में ही पूर्णता का अनुभव कर पाएंगे।

ध्यान विधि कहती है कि श्वास जब पूर्ण रूप से भीतर आ जाती तब भी एक कुम्भक की अवस्था आती है। अर्थात् श्वास भीतर आने के बाद भी एक अदृश्य स्थान पर कुछ क्षण के लिए रुक जाती है। वह भी महाविश्रान्ति का क्षण है।

क्योंकि तब बाहर से ली हुई शुद्ध हवा अर्थात् प्राणवायुपूर्ण हवा नाभि तक के केन्द्रों को प्राभावित करती है। आपको पता नहीं चलता है परंतु सूक्ष्म रूप से करोड़ों नाड़ियाँ शुद्ध वायु युक्त रक्त प्राप्त करके शक्ति, प्रसन्नता और विशुद्धि का अनुभव कर रही होती है।

वह भी परम तृप्ति और संतोष का क्षण है। उस क्षण में ध्यान के द्वारा अगर आपने भी भीतर स्थिर होना सीख लिया तो फिर आप चाहने लगेंगे कि वे दोनों क्षण ज्यादा से ज्यादा लंबे हों।

परंतु इसके लिए आपको ज्यादा समय तक और विशेष गहनता के साथ ध्यान में बैठना पड़ेगा। बाहर और भीतर दोनों बिन्दुओं पर श्वास के विश्रान्ति बिन्दु को प्राप्त करके उनमें उतरते उतरते एक क्षण ऐसा आएगा कि आप संतोष रूप हो जाएंगे। परम तृप्ति का अहसास होने लगेगा आपको, शाश्वत का बोध जग जाएगा। और शाश्वत का बोध जागते ही, शाश्वत संतोष का भीतर ही अनुभव होते ही आप नाश्वत के आकर्षण से छूट जाएंगे। फिर बाहर की चीजों से मन को भरने का प्रयास नहीं करना पड़ेगा। कोई अपूर्णता या असंतोष का भाव नहीं रहेगा और यही सच्ची पूर्णावस्था है।

विधि में बताए हुए दो ठहराव बिन्दुओं में क्षणार्ध के लिए श्वास की गति सहज ही रुकती है। यह रुकना ही शांति है। उसका रुकना ही उसकी ओर से उपदेश है। वहाँ रुकना ही जीवन है।

बाहर की दुनियाँ में चलना, भागना और दौड़ना जीवन है। श्वास के चलने को भी मैं एक स्थूल क्रिया ही कहती हूँ। संक्षेप में कहूँ तो शरीर के अस्तित्व के लिए चलना ही जिन्दगी है और शांति के अस्तित्व के लिए कुछ खास बिन्दुओं पर रुकना है, जिंदगी।

ध्यान के जगत में रुकना ही सही गति है, यही सद्गति है। श्वास की गति के रुकते ही मन का भागना भी रुक जाता है। तब तो साधक को अनुभव होता है एक परम विराम का।

कुछ लोग मेरे पास आते हैं और कहते हैं कि ध्यान विधि छोड़ते ही फिर से हम आधे अधूरे होने का अनुभव करने लगते हैं। सही हैं वे लोग, ऐसा होता है। मैं चाहती हूँ कि ऐसा हो; कुछ ना होने से ऐसा होना अच्छा है। क्योंकि जब ऐसा होगा तब तो आप ध्यान का मूल्य समझ पाएंगे!

आपके पास एक छोटी सी विधि मात्र है। उस विधि के भीतर उतरते ही आप पूर्णता, संतोष, विशुद्धि, शांति और आनंद का अनुभव करने लगते हो। जिसे आप अपना सबकुछ लुटाकर भी नहीं पा सकते हो अपनी जिंदगी में, ऐसा कुछ अद्भुत, अव्याख्यायित, अद्वितीय पा लेते हो आप ध्यान में।

ऐसा कुछ पाने के बाद जब आप ध्यान को छोड़ देते हो तो ध्यान भी आपको छोड़ देगा। फिर से आप फिसल पड़ते हो मुँह के बल। ध्यान के आधार के बिना आपने जान ली अपनी औकात। परेशानियाँ फिर से शुरू होंगी।

प्रिय साधको!

मैं कहती हूँ कि रोग मिटाने के लिए दवाईयाँ खानी पड़ती हैं, कुछ परहेज भी रखने पड़ते हैं। वैसे ही जब आप भीतर से पूर्ण स्वस्थ हो जाओ तब तक ध्यान को मत छोड़ो, मत छोड़ो विधि को। आंतरिक स्वस्थता के बाद फिर ध्यान करना नहीं पड़ेगा। आप ध्यानमय हो जाएंगे, ध्यान आपकी प्रत्येक क्रिया का पर्याय बन जाएगा।

परंतु रोग के मिटने के पहले दवाईयाँ छोड़ी तो क्या हालात होगी? वैसे ही अधूरी साधना छोड़कर फिर से बीमार, भिखारी और



कंगाल मत बनो। बने रहो अपने मन के राजा, मन का गुलाम मत बनो। मन आपको ध्यान से दूर ले जाता है इसलिए सजग रहो। क्यों फैंक रहे हो खजाने की कुंजी अपने हाथों से!

प्यारे साधको!

प्रत्येक ध्यान विधि एक कुंजी है उसे संभाले रखो और खजाना खोलकर देखो भी; केवल कुंजी को मत संभाले रखना, चौकीदार मत बनना अपनी सम्पत्ति के। चौकीदार घर के बाहर लटार मारता है और मालिक का भीतरी खजाने का असली अधिकार होता है।

मैं कहती हूँ कि हमेशा स्वयं के मालिक की भांति जीना। मत छोड़ना ध्यान को। उस हद तक ध्यान में उतरते रहो जब तक आप ध्यानरूप ना बन जाओ; जब तक विधि और आप एक न हो जाओ।

इसलिए विधि आपके जीवन का एक अनिवार्य अंग बन जानी चाहिए। विधि जब तक अचेतन तक न उतर जाए तब तक लगे रहो। जब ऐसा होगा तब फिर अधूरापन महसूस नहीं होगा। आप कच्चा फल खाना चाहते हो, ऐसा मत करो, ऐसा करने से मुँह कड़वा हो जाएगा और फल निरर्थक जाएगा; उसे पकने दो।

लोग कहते हैं कि ध्यान के लिए रोज समय नहीं मिलता है। मैं कहूँगी कि यह झूठ है, पलायन है, खुद से धोखा है। मत करो ऐसा धोखा, कम से कम खुद को तो छोड़ो! शादी विवाह में, नाटक सिनेमा में, पार्टी में, ब्यूटीपार्लर में, सब जगह जाने का समय मिलता है आपको और ध्यान के लिए समय नहीं मिलता!

आप जहाँ कहीं भी जाते हो वहाँ खाते हो कि नहीं, तो ध्यान क्यों नहीं करते? आप सोचते हैं कि लोग क्या कहेंगे, शादी में आया हूँ और ध्यान करूँगा!

या तो सांसारिक कार्यों में उपस्थित रहकर भी ध्यान के लिए समय ढूँढ लो, अथवा मत जाओ ऐसी जगह पर जो आपको ध्यान से दूर करती हो।

प्यारे साधको!

बर्थ डे पार्टी से लेकर शोक सभाओं में हाज़री देने को आप सामाजिक धर्म समझते हो, तो मैं कहती हूँ कि ध्यान तो मनुष्य का परम धर्म है। याद रहे, समाज मनुष्य से बनता है। शादी, विवाह, पार्टियों में जाने को लोग सामाजिक सभ्यता कहते हैं। तो याद रखो! ध्यान कोई असभ्य क्रिया नहीं है। ध्यान तो हर सभ्यता से ऊपर है। क्योंकि ध्यान एक अर्थ में ज्ञान है। जो साधना के द्वारा मनुष्य के भीतर सहज ही जन्म लेता है। सभ्यता ऊपर ऊपर की होती है। सारी सभ्यताएं थोपी गई हैं खास समाज, खास सम्प्रदाय, विशेष ज्ञाति, राष्ट्र और धर्म के अनुसार।

सभ्यता मनुष्य को बाहर से सुंदर और व्यवस्थित जरूर दिखाती है परंतु असहज है, ओढ़ी हुई होती है, जबकि ज्ञान सहज और स्वाभाविक होता है।

मैंने कई लोगों के सभ्यता के मुखौटे को कई क्षणों में उतर जाते हुआ देखा है। परंतु जब ज्ञानोपलब्धि हो जाती है तब असभ्य व्यवहार संभव ही नहीं होता।

जहाँ असभ्य चित्त हो वहाँ सभ्यता के नियमों की आवश्यकता रहती है परंतु जहाँ सजगता, स्वाभाविकता और सत्य ही है वहाँ बेचारी सभ्यता क्या करेगी!

श्वसन विधि के अनुसार बताई गई इस ध्यान विधि से ज्ञानोपलब्धि के कारण स्वतंत्रता और पूर्णता में प्रवेश हो जाएगा। वहाँ सारी सभ्यताओं के मुखौटे उतर जाएंगे और दूसरी अति की बात करें तो अज्ञान की पराकाष्ठा में भी सारी सभ्यताओं की धज्जियाँ उड़ जाती है। और असलियत अपने नग्न रूप में सामने आ जाती है।

कुछ धार्मिक संप्रदाय, कि जिसमें लहसुन और प्याज़ तक खाना अधर्म और पाप कहा है, ऐसे परिवारों के बच्चे आमलेट की लारियाँ और नोनवेज की रेस्तोरां पर जाकर एक दूसरे प्रकार का भोजन खाने को तरसते हैं। क्यों?

क्योंकि सभ्यता थोपी गई थी उन बच्चों पर। तो मौका मिलने पर बच्चों ने चिथड़े उड़ा दिए सभ्यता के।

मैं सभ्यता के विरोध में नहीं हूँ। परंतु ध्यान के द्वारा सत्य का उद्घाटन होता है। सत्य की समझ से सहज ही हकारात्मक परिणाम घटता है। अच्छाइयाँ आपके कदमों में आने लगती हैं। ऐसी अवस्था में न तो सभ्यता ओढ़नी पड़ेगी, न किसी पर थोपनी पड़ेगी।

परंतु मुझे लगता है कि सभ्यता, नीति, नियम और सम्प्रदाय के बहाने समाज के लोग ध्यान से दूर भागते हैं। ये स्वयं के साथ एक धोखा है, बनावट है। वास्तव में उन लोगों का रस ही है बाहर की दुनियाँ में, कैसे उतरेंगे ध्यान में!

प्रिय साधको !

उतरो इन ध्यान विधियों में। सीख लो श्वास के साथ बहना, पहुंच जाओ उस श्वास बिन्दु के विराम तक, फिर बन जाओ विराम रूप। ध्यान का प्रारंभ तनाव के बाद नहीं, तनाव के पहले कर दो। अंग्रेजी में एक कहावत है – prevention is better than cure. मानसिक तनाव पैदा होने के बाद ध्यान में जाने से पहले ध्यान के द्वारा तनाव के कारणों को ही खत्म कर दो।

मैंने देखा है, कुछ लोग घर से, पत्नी से और परिवार से नाराज होकर चले जाते हैं कभी कभी ध्यान शिबिर में, मौन मंदिर में, तीर्थाटन में। वहाँ उन्हें कुछ मिल जाता है। कभी ध्यान से, कभी मौन से, कभी कुदरती सौन्दर्य से। वह गलत नहीं है परंतु अधूरा है।

उसका खालीपन भर जाता है चंद घंटों के लिए। परंतु मौन, ध्यान, सत्संग या प्रकृति की गोद से दूर होते ही फिर से अकेलापन महसूस करने लगते हैं। और जोड़ने लगते हैं अपने मोबाइल, घर पर बात करने के लिए। यह घर के साथ और खुद के साथ की हुई चालाकी है। परंतु मूल कारण तो अज्ञान है। चालाकी के द्वारा अज्ञान थोड़ा मज़ा लेता है, अहंकार पुष्ट होता है परंतु ऐसे मनुष्य को आत्मशांति कभी भी नहीं मिलती।

प्रिय साधको !

भीतर और बाहर श्वास के ठहरने के दो विराम बिन्दुओं को खोज लो। खो जाओ उस बिन्दु में। काम केन्द्र और भाव केन्द्र दोनों का सम्यक अनुनियमन होने लगेगा इस ध्यान से। बहुत सारे प्रश्नों का एक साथ समाधान मिल जाएगा आपको।

प्यारे साधको !

कुछ लोग नेवले प्रकृति के होते हैं। नेवले की एक विशिष्टता है। वह सांप के साथ लड़ता है.... लड़ता है... खूब लड़ता है। फिर थक जाता है, वह एक ऐसी वनस्पति को जानता है कि जिसे सूँघ लेने से उसकी सारी थकान दूर हो जाती है। लड़ते लड़ते वह अचानक भागता है और वनस्पति सूँघकर नई शक्ति प्राप्त करके फिर लौट आता है सांप से लड़ने के लिए।

कुछ लोग भी ऐसा करते हैं। हमारे पास आते हैं। ध्यान से, ज्ञान से, सत्संग से थोड़ी शक्ति, थोड़ा आत्मविश्वास और ऊर्जा प्राप्त कर लेते हैं; फिर लड़ना शुरू कर देते हैं संसार की लड़ाई। फिर थकते हैं फिरके आते हैं ..... फिर .... फिर... फिर....।

याद रहे, आप कोई नेवला नहीं हो, मनुष्य हो। मन के ईश हैं। अपने मन के ईश्वर बनना सीखो, गुलाम नहीं। मन के ईश्वर बनने की विधियाँ हैं ध्यान। ध्यान लड़ना नहीं सिखाता। हमेशा हमेशा के लिए लड़ाई को वह शांत कर देता है। ज्ञानी के सानिध्य में आने वालों का अहिंसा में प्रवेश होने लगता है।

बुद्ध की अपार करुणा बरसने का रहस्य ही था यह ध्यान। पूरी ज्ञेय परंपरा ठहरी है इस विधि पर। शिव ने दी हुई यह विधि विश्व पर किया हुआ सबसे बड़ा अनुग्रह है। इस विधि के दोनों विराम बिन्दुओं पर शरीर के रोम रोम शांति, शुद्धि और तृप्ति का अनुभव करते हैं। प्रत्येक मनुष्य के लिए यह विधि सरल होते हुए भी अद्वितीय है। तो अब उतरो विधि में और मन, बुद्धि तथा अहं की सृष्टि को गिराकर परम विश्राम और पूर्णता को प्राप्त कर लो।

## धरणा - ४४

# प्राण अपान मध्य प्रवेश ध्यान

प्रिय साधको !

श्वास के आधारित पाँचवीं विधि भी अद्भुत है। जरा ध्यान से सुनना। शिव कहते हैं कि यह विधि कर्मयोग के साथ साथ हो पाएगी। यह मज़ा है इस विधि का।

मनुष्य का चित्त और शरीर आज के स्पर्धात्मक माहौल में अपने अपने अस्तित्व टिकाए रखने के लिए और इच्छाओं के कारण बाहरी प्रवृत्ति में व्यस्त रहते हैं। जिसके कारण लोग बहाने बना लेते हैं कि हमारे पास ध्यान में बैठने का समय नहीं है। परंतु हमारे शास्त्रों ने सब प्रश्नों का निराकरण कर दिया।

शिव कहते हैं कि बाहरी प्रवृत्तियाँ करते करते भी आप इस विधि में उतर सकते हो। इसलिए मैं इसे अद्भुत कहती हूँ। मेरी दृष्टि से यह एक विशेष विधि है। इसमें नहीं एकांत, नहीं आसन, नहीं मौन, नहीं अक्रिया में प्रवेश। इसलिए इसे विशेष विधि कह रही हूँ।

यह एक अपवाद रूप ध्यान विधि है। कि जिसमें बाहरी विश्व के व्यवहार संबंधी कार्यों में लगे रहो और धारणा करो कि आप दो श्वासों के बीच में हो। दो श्वासों के बीच में आपकी स्थिति को स्थिर करते जाओ।

आपके राज-ब-रोज के कार्य करते करते उस अवस्था में उतरना सीख लो। यहाँ सत्य की अनुभूति है। वहाँ मध्यदशा का विकास है अर्थात् साक्षीभाव का विकास है। साक्षीभाव को तंत्र शास्त्र मध्यदशा कहता है। वही अवस्था परमात्मा का परम धाम है, वह आपके भीतर का सनातन धाम है। शांति का परम स्रोत और मोक्ष साम्राज्य का सिंहासन है।

आपको होगा कि ऐसी कैसी विधि है कि जो काम काज करते किया करो! मनुष्यों के साथ हर प्रकार से तकलीफ है। ध्यान के लिए बैठना होता है तो समय का बहाना निकालते हैं। विधि चलते फिरते करनी होती है तो उसको उसमें कुछ खास नहीं दिखता। परंतु मैं कहती हूँ कि यह एक बहुत अच्छी विधि है। एक अर्थ में अति सरल है, दूसरे अर्थ में अति कठिन। सबकुछ आपपर निर्भर है। अगर आपकी समग्रता अगर विधि के साथ है, आपका लक्ष्य विधि में प्रवेश करना है तो विधि सरल बन जाएगी। आपका लक्ष्य भी शरीर के साथ साथ संसार के प्रति रहेगा तो विधि कठिन लगेगी।

ध्यान प्रेमी व्यक्ति हर हाल में अपना अनुसंधान साध लेता है ध्यान से। वह कर्म योग में रहते हुए ध्यान योग में प्रवेश कर लेता है। इसे मैं एक विशेष सिद्धि कहूँगी। यह विधि कुछ विशेष लोगों के लिए ही है। एक विशिष्ट कला है, उसे साधारण व्यक्ति भी विकसित कर सकता है परंतु उसके प्रति सदंतर लक्ष्य देना पड़ेगा। यह विधि एक नाटक के खेल की भांति है। यहाँ प्रवीण सागर नाम के ग्रंथ का एक बहुत अच्छा सवैया मुझे याद आ रहा है –

**मोर को ध्यान लग्यो घनघोर से, डोर से ध्यान लग्यो नट की।**

**दीपक ध्यान पतंग लग्यो, पनिहारी को ध्यान लग्यो मटकी।**

**चंद्र को ध्यान चकोर लग्यो, चकवान की ध्यान दिनेश अटकी।**

**मीन मनो जल ध्यान से सागर, पंथ प्रबीन लग्यो अटकी।**

हमारा ध्यान नाचते मोर के प्रति होता है, उसका नृत्य हमें आकर्षित करता है परंतु उसका ध्यान आसमान के घनघोर बादल के साथ होता है। यह विधि एक नट के खेल की भांति है, पनिहारी की गगरी की भाँति है। आपने शायद देखा होगा यह सब। नट डोरी पर चलता है, मुंह में लंबा बांबू ऊँचा रखकर उसपर अपने छोटे से बच्चे को टिकाता है; कितना खतरनाक है यह खेल! अगर लक्ष्य टूटा, जरा भी बेध्यान हुआ तो क्या होगा बच्चे का! जरा सोचो! लोग खेल का मजा लेते हुए वाह! वाह! करते हैं। तालियाँ बजती हैं, कोई चिल्लाता है, कोई सीटी बजाता है। नट की परिस्थिति के कारण नट को यह सब करना पड़ता है। लेकिन लोग दूसरे की पीड़ा में से भी आनंद लेते हैं। बचपन में करीब चार-पाँच साल की उम्र में मैंने ऐसा खेल देखा था। बांबू पर टिकाए हुए बच्चे को देखकर मैं रो पड़ी थी और निकल गई थी वहाँ से। लोगों का वाह! वाह! करना मुझे बेहूदा लग रहा था। छोड़ो इन बातों को। प्रत्येक व्यक्ति की संवेदनशीलता में फर्क होता है।

नट खेल करता है ऐसा हमें लगता है। वह मात्र खेल नहीं होता, एक खतरनाक प्रयोग और परम सत्य भी होता है। परंतु उसका पूर्ण लक्ष्य होता है अपना संतुलन बनाए रखने पर। क्रिया बाहर दिखती है, लक्ष्य कहीं और होता है। वाह! वाह! क्रिया को नहीं मिलती है, लक्ष्य पर के अनुसंधान को मिलती है।

श्री राम की, कृष्ण की, भक्त नरसिंह मेहता, तुकाराम, नामदेव, सेक्रेटिस जैसे संतों की वाह! वाह! हो गई इस संसार में खेल करते करते। परंतु उसका अनुसंधान कहीं और था। जिसकी वजह से खेल इतना अद्भुत था कि देखने वालों को सत्य प्रतीत होता था।

पनिहारी जल से भरे हुए एक के ऊपर एक ऐसे दो-तीन पात्रों को सर पर रखकर, लटक मटक करती हुई, सहेलियों से बातें करती हुई, कभी कभी तो कोख में बच्चे को भी उठाए हुए और घुघटा तान कर भी सरसराट चलती जाती हुई देखी है आपने कभी?

आज के शहरीकरण ने ध्यान सीखने के बहुत सारे देहाती दृश्यों को छीन ली है मनुष्य के पास से। परंतु बचपन में मैंने ऐसे दृश्य बहुत देखे हैं। वह देखना मुझे बहुत अच्छा लगता था। कभी कभी तो ऐसे दृश्यों को देखते देखते ही मेरा ध्यान लग जाता था। भीतर एक समझ खिल उठती थी, जो शास्त्रों के पार की थी।

मैंने भी बचपन में कुएँ से खूब पानी खींचा है। सर पर उठा उठाकर घर पर लाई भी हूँ। सर पर रखे हुए पात्र हाथों की सहाय के बिना कैसे टिकता है, चलने फिरने की क्रियाओं के साथ, उसका अभ्यास भी बहुत किया है। बहुत बार गगरी गिराई भी है और धीरे धीरे यह कला

हांसिल हुई थी। जब गुर मिल गया, अनुसंधान के बिन्दु को जान लिया फिर भरा हुआ पात्र भार नहीं, एक मज्जा बन जाता है। बस, ऐसा ही कुछ करना है आपको इस विधि में, ताकि संसार का भार भी न लगे और ध्यान भी हो जाए।

जल से भरी गगरी सर पर निराधार उठाना या डोरी पर चलने के खेल से तो बहुत आसान है यह ध्यान विधि! अरे! एक नट लक्ष्य पर स्थिर रह सकता है! गाँव की एक साधारण अनपढ़ या मजदूरी करने वाली औरत लक्ष्य पर अनुसंधान साध सकती है! तो ध्यान के लिए समर्पित साधक के लिए तो बहुत सरल है यह विधि।

इस विधि का ज्ञान संदेश देता है कि रिशतों को तोड़ने की कोई जरूरत नहीं है, आसक्ति को तोड़ो; संसार को छोड़ने की जरूरत नहीं है, उसके साथ जुड़े हुए मोह तो तोड़ो; चीजों से मत भागो, सबकुछ पा लेने की इच्छा से मुक्त हो जाओ।

मनुष्य मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारा, कथा-कीर्तन, यज्ञ-याग में आता जाता रहता है। संत और सत्संग उसे अच्छा लगता है परंतु उसका अनुसंधान संसार के साथ है। इस वजह से ईश्वर के साथ अनुसंधान साधने से उनके क्षणिक प्रयास व्यर्थ जाते हैं।

ज्यादातर लोगों के लिए ईश्वर केवल सहारा है, लक्ष्य नहीं। विधि कहती है कि लक्ष्य बना दो ईश्वर को, सत्य को, भीतर के परमात्मा को, अंतर की शांति को। बाहर सबकुछ नाटक चलते रहने दो। अगर भीतर का अनुसंधान सत्य के साथ होगा तो उसकी सुवास बाहर के नाटक में भी रहेगी। लोग दंग रह जाएंगे आपकी सांसारिक भूमिकाओं को देखकर। परंतु लक्ष्य सत्य के प्रति केन्द्रित होना चाहिए।

विधि बताती है कि कर्मयोग को करते करते दो श्वास के मध्य में मन को स्थिर करते रहो, आपका पुनर्जन्म हो जाएगा।

अब जरा ध्यान दो, दो श्वास के बीच में वह परमात्मा विराजित है। उसकी पराशक्ति वहाँ स्पंदित हो रही है। श्वास क्रिया तो भीतर और बाहर पल भर के लिए रुकती भी है। परंतु हृदय का स्पंदन नहीं रुकता। धड़कों का उठना नहीं रुकता, वही परम सत्य है।

ये सब कौन करता है? एक अदृष्ट शक्ति। जिसे कुदरत, आतमराम, ईश्वर कुछ भी कह लो। वह परम शांत और सर्व साक्षी है। पूरे ब्रह्मांड को क्रियान्वि रखने वाला स्वयं अदृष्ट और क्रिया के पार है।

दो श्वासों के बीच में, मन को स्थिर करने के अभ्यास से वह क्रिया के पार, मन के पार, वाणी के पार, इन्द्रियों के पार और शब्दों के पार के परब्रह्म की महाशांति और साक्षीत्व का सूक्ष्म संस्पर्श हो जाएगा।

विधि में उतरने के बाद ही आप इस बात को समझ पाएंगे। अपने कार्यों को करते करते छूटे रहो उस ब्रह्म बिन्दु को। प्रारंभ में थोड़ा विक्षेप या असुविधा का अनुभव होगा फिर तो आपकी चेतना उस साक्षी बिन्दु और शरीर के बीच में एक तालमेल बिठा लेगी। जिसकी वजह से यह विधि आपके लिए स्वाभाविक हो जाएगी।

फिर तो आप मज्जा लेंगे इस विधि का। धीरे धीरे विधि आसान होती जाएगी। जैसे जैसे आपका मन उस परम बिन्दु से निकट आता जाएगा वैसे वैसे कार्य में दक्षता बढ़ती जाएगी। कार्यकुशलता बढ़ने की वजह से आपका सांसारिक अभिनय बिलकुल वास्तविक लगेगा।

श्री कृष्ण कहते हैं कि – “योगः कर्मसु कौशलम्।” अर्थात् कर्म में कुशलता ही योग है – इस बात का सीधा संबंध इस विधि के साथ है। अपना अपना कारोबार चलाते हुए भी मनुष्य का मन स्थिर होता है इस बिन्दु में। तो फिर कर्म केवल कर्म नहीं रहेगा। वह कर्मयोग की ऊंचाई प्राप्त करेगा। विधि कहती है कि इस ध्यान में प्रवेश करते ही आप द्विज हो जाएंगे। द्विज का अर्थ है फिर दोबारा पैदा होना। पंछी को भी संस्कृत में द्विज कहते हैं, क्यों? क्योंकि पंछी अंडे के रूप में पैदा होता है दोबारा आकार लेकर पक्षी के रूप में। मनुष्य को द्विज की दीक्षा दी जाती है यज्ञोपवीत संस्कार के द्वारा।

परंतु आज तो वे सब संस्कार एक ज्ञाति विशेष की सभ्यता, परंपरा, रूढ़ि, कर्मकांड अथवा औपचारिकता मात्र बन गए हैं। एक जमाने में यज्ञोपवीत संस्कार का गहरा संबंध मनुष्य की अंतरचेतना के साथ जुड़ा हुआ था। ध्यान में आने वाले प्रत्येक मनुष्य को मैं द्विज की दीक्षा देना चाहती हूँ। कभी कभी तो पक्षी मनुष्य से ज्यादा अच्छा लगता है, ज्यादा मुक्त है ऐसा लगता है। क्योंकि कुछ समय के बाद वह अंडे में से बाहर आ जाता है अपने मूल रूप में, माँ की थोड़ी ऊर्जा, थोड़ा प्रेम, थोड़ा देखभाल, थोड़ी सुरक्षा की विधि के बाद।

मादा पक्षी का अंडे पर सजगता से बैठना और अपनी गर्मी और भाव देते रहना अंडे के भीतर की चेतना को। उसे में पुनर्जन्म कराने की और सुरक्षा की विधि कहती हूँ। पक्षियों में घटती हुई यह घटना एक गहन विधि से बिलकुल कम नहीं है।

परंतु क्या कहूँ आज के मनुष्य की माताओं को! एक पक्षी की माता जो अपने भावी बच्चे के लिए कर सकती है ऐसी कोई क्षमता का दर्शन आज की नारियों में नहीं मिल रहा है अपने बच्चों को इसी जन्म में पुनर्जन्म कराने के लिए।

कुछ दिन पहले टी.वी. का एक कार्यक्रम मेरे देखने में आया। कुछ समय पहले जिस बच्चे की मृत्यु हो गई है उसकी आत्मा को फिर से उसकी ही माता की गोद में उदारने का दावा करने वाले एक तथाकथित तांत्रिक को मैंने देखा। पुत्र मोह और विरह में तड़पती माताओं से तगड़ी फीस वसूल करने वाले ढोंगी तांत्रिकों की आपको मूर्ख बनाने वाली विधियों में से उतरने की जगह आज की माताओं को मैं कह रही हूँ



कि ज्ञान से जाग जाओ। मैं जो बात कर रही हूँ वह एक ज्ञान के स्तर से, एक आध्यात्मिक स्तर से कह रही हूँ। मृत बच्चे की आत्मा को एक ही माता ने दुबारा नहीं परंतु मान लो कि किसी तांत्रिक के द्वारा तीसरी बार भी पैदा कर लिया तो भी आध्यात्मिक दृष्टि से वह पुनर्जन्म नहीं है। पुनर्जन्म वही है जिसमें आपकी संतान ज्ञान को उपलब्ध हो जाए और संसार से मुक्त हो जाए।

पक्षी के अंडे की तरह मनुष्य भी अज्ञान और माया के आवरण से ढंका हुआ है। वह एक अदृश्य आवरण है।

प्यारी माताओ!

आप थोड़ी जाग्रति के साथ थोड़ा मनोबल दृढ़ करके, अपनी भवुकता को थोड़ी संयमित करके, आपकी संतान के ईर्द गिर्द जो अज्ञान का आवरण है उसे टूटने दो। आपको भले और कोई ज्यादा ज्ञान न हो, परंतु संसार की असारता का ज्ञान तो आपने ले लिया है। संसार में मिठास से ज्यादा कटुता है, जिसको आपने अति निकट से देखा है। संसार की निरर्थकता का बोध तो आपको है ही, तो फिर इस कटु सत्य को अपनी संतान के सामने प्रगट करके आप उसे क्यों नहीं जगा रही हैं? इसी जन्म में उन्हें पुनर्जन्म क्यों नहीं दे रही हो?

आप उन्हें क्यों धकेलती रहती हैं, आप जैसी हालात बनाने के लिए। आपको क्या खुशी मिलती है उससे? क्या अपनी संतान को अज्ञान की सम्पत्ति देकर आप बदला ले रही हो पूरे संसार से? कि मोहांध हो या स्वार्थी!

जाग जाओ और जगा दो अपनी संतान को। जैसे माता मैनावती ने गोपीचंद को जगाया, माता मदालसा ने लोरियाँ गा गा कर पुत्र को ज्ञान पिला दिया, जैसे माता सुनीति ने ध्रुव को चेता दिया।

शिव ने ध्यान का पूरा ज्ञान एक प्रेमिका को, एक पत्नी को, एक नारी को और एक माता को दिया है। क्या कारण है इसका? क्योंकि जननी अगर चाहे तो अपने संतान की प्रथम और अंतिम गुरु बन सकती है। मैं कहतू हूँ कि प्रत्येक ध्यान विधि मनुष्य का पुनर्जन्म करा सकती है। वही सही द्विजत्व है।

आज मेरी परम पवित्र जननी मुझे याद आ रही है। बचपन में वह मुझे बार बार कहा करती थी कि मेरी एक संतान अगर सन्यासी हो गई तो मेरा संसार सार्थक हो जाएगा। छोटी छोटी बातों में उनके द्वारा फैंके हुए सन्यास और ज्ञान के बीज समय के साथ मुझमें उग निकले।

प्रिय माताओ!

बड़े होकर जो बच्चे उड़ जाते हैं अपने माता पिता को छोड़कर, ऐसे पक्षी भी अपनी संतान को अंडे के आवरण से मुक्त करके उनकी पंख फैलाने को पुनर्जन्म करा देते हैं। पंख फैलाना सिखाते भी हैं। तो आप तो मनुष्य हो, कुछ तो करो!

अपनी संतान को सत्य, सत्संग और अनुभव की गर्मी देकर हटा दो उसके अज्ञान के आवरणों को। तभी वह सही अर्थ में द्विज होगा। हजारों रुपये के खर्च करके यज्ञोपवीत करने की विधि करनी है, तो एक धार्मिक सामाजिक उत्सव के रूप में जरूर करो। मैं कर्मकांड की विधियों की विरोधी नहीं हूँ। परंतु जिन विधियों का परिणाम न मिले ऐसी विधियों के पक्ष में भी नहीं हूँ।

समझ के बिना जनेऊ के धागे कुछ खास मदद नहीं करेंगे। हाँ, तिजोरी की चाबी लटकाने में जनेऊ काम आ सकती है। मैं कहती हूँ अपनी संतानों को ज्ञान सूत्रों से दीक्षित करो। उसे वास्तव में पुनर्जन्म दो। अगर विश्व की माताएं मेरी बात समझ गईं तो मेरा काम आसान हो जाएगा।

शिव को पता होगा कि अज्ञानी, मोहांध और स्वार्थी जननी बच्चे के अज्ञान का आवरण नहीं हटा पाएंगी इसलिए तो उन्होंने एक ध्यानविधि को माता का स्थान दे दिया। और कहा कि इस विधि से साधक का पुनर्जन्म हो जाएगा।

एक ही जन्म में दूसरा जन्म; प्रथम जन्म शरीर के रूप में और दूसरा जन्म ज्ञानी के रूप में। यह ज्ञान घटेगा ध्यान से और ज्ञान के द्वारा जब एक बार पुनर्जन्म हो गया तो फिर बार बार पैदा होना और मरना मिट जाएगा।

प्रिय साधको!

अगर इस विधि को पा लिया तो ज्योतिष चक्र की घटनाएं भी आपको हर्ष शोक नहीं दे पाएंगी। भविष्यवेत्ता आपको डरा नहीं पाएंगे। भविष्यवाणी का अर्थ है नियति की घोषणा।

मैं कहती हूँ कि आपके लिए जो भविष्य निश्चित है उसका दायित्व स्वीकार करना यह आपका परम धर्म है। कब तक पलायन करोगे! भविष्यवेत्ता की भविष्यवाणी को जानकर आदमी परिस्थितियों से भागने या बचने का प्रयास करने लगता है, यह अज्ञान है।

जैसे जैसे भागते जाओगे, वैसे वैसे भविष्य ज्यादा निकट आता जाएगा। समय के नियम के अनुसार तो भागने का एक ही रास्ता है और वह है भविष्य। अतीत की ओर तो भागने का कोई रास्ता नहीं बचा। भविष्य से भागकर कहाँ जाएंगे? भविष्य से भागना मतलब, निश्चित

और पूर्वनिर्धारित जिम्मेदारियों से भागना।

मैं कहती हूँ कि भागना भी आपके हाथों में नहीं है। आपको लगता है कि सबकुछ मैं कर रहा हूँ हकीकत में आपके द्वारा सब होता रहता है। इसे जान लेना ही सत्य ज्ञान है।

भविष्य अति निकट आ जाता है तब बन जाता है वर्तमान। वर्तमान दूर जाता है तब बन जाता है अतीत। जैसे समय नहीं रुकता वैसे ही नियत घटनाएं भी नहीं रुकती। उस नियत घटनाओं को मैं नियति कहती हूँ। मनुष्य जैसे समय से नहीं भाग सकता वैसे ही नियति से भी नहीं भाग सकता। परंतु जिस ध्यान विधि को आप समझ रहे हैं वह आपको सिर्फ वर्तमान में रहना सिखा देगी। हर नियति वर्तमान बनकर आ जाएगी। जब वर्तमान का स्वीकार तो हर सुख दुख का स्वाभाविक स्वीकार। ध्यान मनुष्य को समय के पार ले जाता है।

ध्यान में साधक अस्तित्व के चरणों में संपूर्ण समर्पित हो जाता है, खुद को छोड़ देता है अस्तित्व पर, और जब पूरा अस्तित्व किसी चेतना को मदद करने लगता है तब नियती का दुष्प्रभाव कम हो जाता है।

इस ध्यान विधि में उतरने से आपके चित्त में एक स्पष्टता आ जाएगी कि जो होने वाला है वह होगा। जो आएगा वह चला भी जाएगा, जो भी होगा वह होकर मिट जाएगा। नियत घटनाएं घट जाती हैं तब नियति समाप्त हो जाती हैं। तो घटने दो उसे।

आपको आपका कार्य कर्ता भाव से दूर रहकर करना है। आपको हमेशा स्मरण रखना है कि न तो नियति के कड़वे मीठे फल से मेरा ज्यादा लेना देना है और न मेरे कर्मों से। मेरे वर्तमान कार्य को मुझे अद्भुत और सुंदर ढंग से करना है, एक सफल और कुशल अभिनेता की भांति। जिससे वर्तमान में आप संतुष्ट और आनंदित रहेंगे।

आपको स्मरण रखना है कि मैं दुनियाँ के रंगमंच पर क्षणिक हूँ। उस क्षण का आनंद लेना है और देना है। वास्तव में हूँ ही नहीं, जो कुछ भी है वह दो श्वासों के बीच के बिन्दु के बीच की परम विभ्रंति है। वही मेरा सच्चा स्वरूप है। जो दिव्य और अविनाशी है। अदृष्ट और निराकार है। सूक्ष्म और साक्षी है। रंगमंच पर जो दिखता है वह तो उस अदृष्ट के हाथ का खिलौना है।

नियति के प्रवाह में सुख दुख आते जाते रहते हैं। दो श्वासों के बीच के विराम बिन्दु में मन स्थिर करके आते जाते सुख दुखों में अपनी भूमिका निभाते हुए देखते रहो एक दृष्टा की तरह तटस्थ भाव से। आती जाती चीजें एवं घटनाओं के साथ मत भागो, मत भटको, विचलित मत होओ।

अगर नियति के न्याय से भागना चाहोगे तो भी नहीं भाग पाओगे क्योंकि वह न्याय अस्तित्व निर्मित है। बचकर जाएंगे कहाँ? हो सकता है कि भागने से मुश्किलें बढ़ें। स्वीकार कर लो नियति का, इस स्वीकार से आत्मबल बढ़ेगा, अज्ञात में से आशीर्वाद बरसेंगे, मनोयुद्ध मिट जाएगा, आंतरसंघर्ष खत्म हो जाएगा, शांति बढ़ेगी और आप ज्ञान को उपलब्ध हो जाओगे।

मनुष्य को जीवन रहस्यमय लगता है परंतु सबकुछ प्रीप्लान्ड है। यह सृष्टि एक लंबा ड्रामा है, एक ब्रह्मांडनाटक है; आप उस नाटक के एक अंश हो। एक बार जब आपको पता चल जाएगा कि जो बाहर है वह भीतर नहीं है। आपने अगर जान ही लिया ध्यान के द्वारा कि भीतर परम स्थिरता और बाहर आप एक अविरत युद्ध का योद्धा हो। जब राज खुल गया तो फिर हारना या जीतना कोई खास मायना नहीं रखता।

तब तो अच्छे से लड़ना ही मजेदार लगेगा। रहस्य जान लेने के बाद तो समग्र विश्व और जीवन एक एकांकी नाटक लगेगा।

अगर जीवन नाटक ही है तो फिर वह नाटक ट्रेजडी हो या कोमेडी क्या फर्क पड़ता है! फिर तो सुख और दुःख दोनों नाटक बन जाएंगे। हर हाल में आप सीख लेंगे अच्छे से अच्छी भूमिका निभाना।

यह ध्यान विधि आपको सिखा देगी वह परम सत्य, कि जहाँ अतीत का स्मरण नहीं, वर्तमान का स्वीकार और भविष्य के लिए अवरोध।

शिव पार्वती से कहते हैं कि बाहरी प्रवृत्ति के साथ इस विधि में उतरो दो श्वासों के मध्य में; वहाँ मन को स्थिर करते रहो।

ऐसा क्यों? ऐसा इसलिए कि मनुष्य भीतर और बाहर का संतुलन साधना सीखे। ऐसा इसलिए कि जीवन में संसार और सन्यास का सुभग समन्वय हो जाए। ऐसा इसलिए कि मनुष्य कर्म करते करते भी अपनी आध्यात्मिक स्थिरता को न खोए। ऐसा इसलिए कि वह भीतर से इतना स्थिर हो जाए ध्यान का अभ्यास करते करते कि बाहरी प्रवृत्तियाँ उसे विक्षेप न कर पाएं। शिव ने जान लिया था कि वह समन्वय बिन्दु दो श्वासों के मध्य में है।

प्रिय साधको!

प्रारंभ में यह विधि कठिन लगेगी परंतु रोज बरोज के काम काज के साथ करने होने के कारण केन्द्र के प्रति आपकी एकाग्रता विशेष

रूप से घनीभूत होती है। उस केन्द्र के प्रति सजगता बढ़ जाती है। जैसे जैसे सजगता बढ़ेगी वैसे वैसे आपका अस्तित्व समायोजन साध लेगा अंतरबहिर दोनों जगत के साथ।

आपकी चेतना दोनों स्तर पर काम करने लगेगी। डबलरोल वाली फिल्म की भांति। धीरे धीरे उलझने मिट जाएंगी।

आपको होगा कि दोनों में से सत्य क्या? गहन अभ्यास के बाद यह प्रश्न गिर जाएगा। अनुभूति आपको बता देंगी कि दोनों सत्य। जगत भी सत्य, ब्रह्म भी सत्य।

भीतर का स्थिरत्व एक आध्यात्मिक सत्य है और दुनियादारी में भूमिका एक सांसारिक सत्य है। दोनों स्थिति ध्यान को ज्ञान की ओर ही ले जाएंगी। अभ्यास की गहनता के बाद दोनों स्थितियाँ आपको आनंद दे सकती हैं।

पुराण कहता है कि मैथुन सृष्टि की रचना शिव ने की। क्या जरूरत थी ऐसा करने की? – ध्यान धर्मा शिव ने चिंतन किया होगा कि ध्यान की अन्य विधियाँ मनुष्य को संसार जगत से विमुख कर देती हैं। अगर सबने ऐसा कर लिया तो माया निरर्थक, जगत निरर्थक और सृष्टि भी निरर्थक हो जाएगी। विश्व निरस और मृत हो जाएगा। फिर मज़ा क्या यह दुनिया बनाने का। निष्प्राण विश्व सत्य होने पर भी सुंदर नहीं लगेगा। जीवन की सार्थकता तो तब है कि संसार भी रहे और ज्ञान भी।

इसलिए शिव ने एक ऐसी विधि दी कि मनुष्य की बाहर की दुनिया चलती रहे परंतु उसकी चेतना का अनुसंधान भीतर बना रहे, ताकि आसक्ति के बंधन से वह पीड़ित न हो।

शिव जीवन रस के उपासक हैं। स्मशान में रहकर भी वे स्वर्ग की सृष्टि खड़ी कर सकते हैं। उन्होंने अवश्य सोचा होगा कि ध्यान के द्वारा सभी मनुष्य संसारभाव से निवृत्त हो जाएं तब सत्य को उपलब्ध तो हो जाएगा, सत्यम् और शिवम् का भाव तो सफल हो जाएगा परंतु सृष्टि का सौन्दर्य मृतःप्राय हो जाएगा।

प्रेम के द्वारा धबकती यह सृष्टि मृतःप्राय हो जाएगी। ऐसा न हो इसलिए उन्होंने यह विशिष्ट विधि दी, जहाँ संसार भी सुंदर और सन्यास भी सुंदर। ताकि सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम् तीनों भाव सार्थक हो पाएं।

परंतु मनुष्य की एक ही गलती हो जाती है बार बार कि वह नाटक के खेल में खेलते खेलते खेल से तन्मय हो जाता है, उसकी सांसारिक भूमिका में तद्रूप हो जाता है।

विधि कहती है कि दुनिया को लगना चाहिए कि आप तद्रूप हो अपनी भूमिका में, पूरे पूरे तन्मय हो। तब तो हुई एक सफल भूमिका! परंतु आपकी सच्ची तन्मयता होनी चाहिए स्वस्वरूप के साथ। इसीलिए कहा कि कर्म योग करते करते मन को स्थिर करो दो श्वासों के बीच के बिन्दु में। वहाँ साक्षी चैतन्य बैठा है। असल में तुम वही हो। इस सत्य का बार बार बोध करने से साधक का उसकी बाहर की भूमिका के साथ साधारणीकरण नहीं होता है। वास्तव में यह विधि बाहरी जगत के साथ के तदात्म्य को तोड़ने की ही एक विधि है। परंतु जगत को छोड़कर नहीं, जगत के साथ रहकर।

वह साधारणीकरण जब टूट जाएगा तब वर्तमान या कर्म निर्मित सुख-दुःख आपको विचलित नहीं कर पाएंगे।

इस ध्यान विधि और नियति के संदर्भ में भारत के पास एक अद्भुत पुराण कथा है। देवकी और वासुदेव के विवाह के बाद कंस देवकी को उसके ससुराल पहुंचाने जा रहा है, बड़े प्रेम से विदा दे रहा था। मध्य रास्ते में भविष्यवाणी हुई कि देवकी का आंठवां गर्भ कंस का वध करेगा।

कृष्ण एक गर्भावक्रांति घटित पुरुष थे। उसने अस्तित्व के निर्णय का सहज स्वीकार कर लिया। स्वीकार कर लिया नियति का आदर और समग्रता के साथ। वे अपना कार्य निभाने के लिए जन्म से ही तैयार हो गए।

बचपन से ही रंगमंच पर भूमिका अदा करना शुरू कर दिया नियति को पूर्ण करने के लिए और अंजाम दे दिया नियति को। इस तरह से उन्होंने अपना दायित्व पूर्ण किया।

कृष्ण के पास होनी को टालने की बात ही नहीं है। लोग कहते हैं कि होनी को कौन टाल सकता है.....? ऐसे मजबूर और निराशा के स्वर नहीं थे कृष्ण के पास। वे कहते हैं कि सबकुछ होने दो, जो होगा वो ठीक होगा....। नियत कर्म को करते रहो। फलाकांक्षा छोड़ दो। कर्म अगर नियति के अनुसार करना पड़ता है तो फल का भार भी नियति पर छोड़ दो।

यह है निराकांक्षा की अवस्था। इसी वजह से तो कृष्ण सबकुछ करते हुए भी योगेश्वर हैं। आप भी योगेश्वर बन सकते हैं, उतरो ध्यान में होने दो आत्मा परमात्मा का संयोग।

प्रिय साधको!

अगर जीवन का अंतिम परिणाम मृत्यु है और मृत्यु के बाद पैदा ही होना है तो फिर इसी जीवन में पुनर्जन्म क्यों नहीं घटने देते हो ?

शिव कहते हैं कि दो श्वास के मध्य में मन को स्थिर करने वाले का पुनर्जन्म घट जाएगा। अगर ऐसा हो गया तो घटना बहुत सस्ते में घट रही है। यात्रा को लम्बी क्यों खींचते हो ? उतरो विधि में। मेरा एक शिष्य है – स्वामी शैलेश्वर। मैंने उसे कुछ ध्यान विधियाँ और योग के अंग बताए हैं। मैं उसे प्यार से लाला कहकर पुकारती हूँ। वैसे तो पैतीस साल का है परंतु उसने अपने आपमें बच्चा अर्थात् अपनी सरलता और निर्दोषता को जिन्दा रखा है। कभी कभी उसे डांट भी पड़ती है। तब तो चुप हो जाता है फिर कुछ घंटों के बाद खेलता, कूदता, हँसता हुआ आता है मेरे पास और कहता है कि आज तो लाला को डांट पड़ी ... फिर से हँसता है। ये योग का परिणाम है।

योग के ध्यान-धारणा से साधक इतना सरल और सजग हो जाता है कि उसके साथ घटती प्रत्येक दुन्यवी घटना उसके भीतरी स्तर तक पहुँचती ही नहीं। वह जान लेता है कि भीतर केवल सत्य है। बाहर मात्र अभिनय। बाहर तो चल रहा है कथकली।

मुखौटे को सुख क्या दुःख क्या ? निंदा क्या, स्तुति क्या ? जो कुछ भी हुआ है वह ऊपरी ढाँचे के साथ घटा है।

गलतियाँ हुईं तो ऊपरी स्तर पर से हुईं, डांट भी उसी स्तर को पड़ी, इससे सत्य का क्या लेना देना ! मैं तो परम सत्य हूँ। मैं अनाम और अविनाशी हूँ। मुझे तो कुछ भी नहीं हुआ, जो हुआ वो आकार, प्रकार और क्रिया को हुआ। मैं तो सुरक्षित ही हूँ, तो मनाओ जश्न... नाचो... गाओ !

बस, यही बात यह ध्यान विधि सिखा रही है। भीतर और बाहर का संतुलन। स्वीकार और अवरोध, नाटक में समग्रता होते हुए भी सत्य में स्थिरता। एक तरफ समभाव दूसरी ओर भावातीत अवस्था। कैसी मजे की बात है यह !

एक दृष्टांत याद आ रहा है। एक संत का पुत्र मर गया, संत नाचने लगा, लोग शोक मनाने आते थे और संत नाचता था। दोस्तो ने कहा पागल हो गए हो, कुछ शर्म बची है कि नहीं ? तब संत ने जवाब दिया – “मैं तो अभिनय कर रहा था पिता का, जो मरा उसका अभिनय था पुत्र का। एक पात्र रंगमंच पर से उतर गया मेरी बारी बाकी है। अभिनय खत्म होने में रोना क्यों ?”

ये है कर्मयोगी के साथ भीतरी बिन्दु में स्थिर होने का परिणाम। जहाँ एक प्रकाशपूर्ण, ज्ञानपूर्ण और आनंदपूर्ण प्रभात है। वही है पुनर्जन्म।

जो अभिनेता और दृष्टा, दोनों से भिन्न है। अभिनेता और भीतर देखने वाला भी सत्य है परंतु जो भीतर दिखाई दे रहा है वह परम अंतिम और सनातन सत्य है।

## धरणा - ४५

### प्राणापान मध्यबिन्दु ध्यान

प्रिय साधको !

द्वादशांत शब्द तंत्र शास्त्र में बार बार आता है। द्वादशांत का अर्थ है भीतरी बारह ( १२ ) प्रमुख प्राणबिन्दु की सम्पूर्ण सीमा और उतनी ही बाहर की सीमा।

वैसे तो द्वादशांत शब्द योग एवं तंत्र में विविध अर्थ में और विविध स्थान के लिए इशारा करते हुए प्रयुक्त हुआ है। परंतु इस ध्यान विधि में केवल प्राण के भीतर और बाहर के स्थानों के संदर्भ में ही द्वादशांत का अर्थ समझना है।

विधि कहती है कि हृदय, प्राण और अपान वायु का मिलन बिन्दु है और श्वास के निःसरण के बाद बारह अंगुल तक का स्थान भी अपान और प्राणवायु का मिलन बिन्दु है। उन दोनों मिलन बिन्दुओं को साक्षी भाव से देखते रहने से साधक ज्ञानोदय का पात्र बन जाता है अर्थात् साधक के ज्ञान का उदय हो जाता है।

प्रिय साधको !

सबसे पहले तो प्राण और अपान इन दोनों शब्दों के अर्थ को और हमारे जीवन में उसकी भूमिका क्या है, उसको समझ लेना बहुत जरूरी है। स्वाभाविक है कि संस्कृत की कठिन शब्दावलियों से ऊब कर कुछ ध्यान प्रेमी कुछ ध्यान विधियों को ही छोड़ देते हैं। परंतु ऐसा नहीं करना चाहिए। अभ्यास के द्वारा बार बार पुनरावर्तन से कठिन चीजें समझ में आने लगती हैं। शब्द आपकी मदद करने लगता है। फिर भी मेरे ध्यान शास्त्रों में मैंने योग और तंत्र की कुछ गूढ़ शब्दावली का यथासंभव सरलीकरण करने का प्रयास किया है। मुझे भाषा में इतनी क्रांति नहीं करनी है कि बचे कुचे कुछ यौगिक शब्द बिलकुल अदृश्य हो जाएं।



अप्रचलित एवं कठिन शब्दावलियों के कारण ही योग और तंत्र समाज में से अदृश्य हो रहा है और उसके नाम पर केवल आसन और दारा-धागा एवं गंडा-ताबीज बच गया। इसीलिए तो मैंने बहुत कम परंतु अनिवार्य ऐसे गूढ़ शब्दों का प्रयोग कई स्थानों पर किया है।

एक दूसरी भी बात है, किसी भी चीज को केवल शास्त्रीय आधार पर समझने से कभी कभी चीजें ज्यादा कठिन हो जाती हैं। मैं कहती हूँ कि शास्त्र की भाषा को आधुनिक और सरल भाषा में समझकर मनुष्य को सत्य धर्म का बोध कराना ही ज्ञानी संतों का परम कर्तव्य है।

कभी कभी विशिष्ट भाषा के कारण शास्त्रीय शब्दों को बार बार दोहराने पर भी साधक को अर्थघटन समझ में नहीं आता है। और अर्थघटन की समझ के बिना विधि में उतरना असंभव हो जाता है। तांत्रिक शब्दों से खड़ी हुई उलझन साधक को विधि में आगे नहीं बढ़ने देती।

मेरा प्रयास तो है कि मेरे साधक गहन शब्दावलियों में न उलझें। परंतु ध्यान शास्त्र में मेरे लिए अनिवार्य हो गया है उन शब्दों का प्रयोग करना।

हमारे पास ध्यान की सारी विधियाँ और मेरे द्वारा खोजी गई विधियाँ आपको देने के लिए भी प्रारंभ में शब्द का ही माध्यम है। अनुभूति तो दी नहीं जा सकती! वह तो व्यक्ति की एक स्वतंत्र संपत्ति है। जिसका हस्तांतरण चाहने पर भी नहीं हो पाएगा। इसलिए जहाँ तक शास्त्र की बात है वहाँ तक तो शब्द ही अंतिम सहारा हैं। इसलिए मुझे भी उन्हीं शब्दों से गुजरना उचित और अनिवार्य लगता है।

हाँ, जब आपको शास्त्र के सत्य का अनुभव हो जाएगा तब शब्द छूट जाएंगे।

प्रिय साधको!

सबसे पहले तो प्राण और अपान की व्याख्या और उनके कार्य को समझना योग और ध्यान के अभ्यासी के लिए अत्यंत जरूरी है। साधारण वक्ता या चिंतक उसे केवल श्वास रूप बता करके बात खत्म कर देंगे। परंतु एक खोजी के लिए गहन शब्द और उसकी गहन प्रक्रिया को समझना अनिवार्य है।

योग शास्त्र के अनुसार प्राण का उदय हृदयाकाश में होता है। अर्थात् हृदय में स्थित स्पेस अर्थात् हृदय के भीतर की खाली जगह में जो वायु है उसको योग शास्त्र प्राण नाम से जानता है।

वह वायु नासिका मार्ग से बाहर निकलकर बारह अंगुल चलकर बाहर के आकाश में विलीन हो जाता है। नासिका से बाहर आई हुई वायु का जितनी सीमा में क्षणिक अस्तित्व रहता है उसे योग और तंत्र बाह्यद्वादशांत कहते हैं। प्राण की इस स्वाभाविक बाह्य गति “रेचक” नाम से प्रसिद्ध है।

बाह्यद्वादशांत में अर्थात् नासिका के बाहर के बारह अंगुल की परिधि में अपान का उदय होता है। और नासिका मार्ग से चलकर यह हृदय स्थित कमलकोष में विलीन हो जाता है। अपान की यह स्वाभाविक आंतरगति “पूरक” कही जाती है।

प्राण द्वादशांत में और अपान हृदय में क्षण मात्र के लिए विलीन हो जाता है, ये प्राण की कुम्भक अवस्था है। यह अवस्था बाहर और भीतर दोनों स्थानों में निष्पन्न होती है।

मनुष्य के श्वास प्रश्वास की निरंतर चलने वाली स्वाभाविक प्रक्रिया से निष्पन्न होने वाली यह पूरक, रेचक, बाह्यकुम्भक और अंतरकुम्भक अवस्थाओं का सावधानी से निरीक्षण करने वाला योगी आवागमन चक्र से मुक्त हो जाता है।

प्रिय साधको!

वायु की गति के साथ चेतना को गतिशील करने से मन की गति भी नियंत्रित हो जाती है। ऐसा क्यों? क्योंकि आपकी समग्र चेतना जब श्वास की गति की ओर ही जाएगी तब मन क्षीण हो जाएगा। मन के प्रति दुर्लक्षता पैदा होगी। मन में जितना रस लेते हो उतना मन बड़ा होता जाता है। उपेक्षित होने से अदृश्य हो जाता है। इसलिए श्वास के आधार पर शिव से लेकर पतंजलि और बाद में बुद्ध से लेकर आज तक इस विधि का विविध नामों से प्रयोग किया गया है। अर्थात् यह विधि मन की दशा को नियंत्रित करने के लिए एक अत्यंत उपयोगी विधि है।

परंतु तंत्र मार्ग के, और खास करके तंत्र अंतर्गत सहज मार्ग के कुछ साधना ग्रंथ; उदाहरण रूप रुद्रयामल जैसे तंत्र ग्रंथों ने ध्यानियों के लिए एक विशेष बात बताई कि शरीर मन और श्वास के साथ किसी भी प्रकार का दमन नहीं करना है।

किसी खास प्रकार से पूरक, कुंभक रेचक नहीं करना है। श्वास एक कुदरती व्यवस्था है, चलते फिरते, उठते-बैठते, सोते-जागते श्वास की गति निरंतर चलती रहती है। जो जीव प्राणीमात्र में सहज और स्वाभाविक है। मनुष्य में आठ प्रकार के प्राणायाम निरंतर और स्वाभाविक रूप से निष्पन्न होते रहते हैं। मनुष्य को उसके लिए कुछ भी करना पड़ता नहीं है।

ध्यान शास्त्र कहता है कि साधक जब स्वाभाविक बोध से प्राणों की विविध अवस्थाओं को जब जानता रहता है तब अंतरमुख हो जाता है। फिर सबकुछ करते हुए भी वह कर्म से लिप्त नहीं होता।

बुद्ध ने इस विधि को “आनापानस्मृति” नाम दिया है। योगशास्त्र इसे प्राणायाम कहते हैं। और मैं उसे “प्राणायाम मिलन बिन्दु ध्यान” कहती हूँ।

अब आइए फिर से प्राण और अपान की बात पर। क्योंकि इन शब्दों को लेकर लोग बहुत वाद विवाद करते हैं। ध्यान के लिए जीवनभर काम करने वाले कुछ रहस्यवादियों ने भी केवल श्वास शब्द प्रयोग करके संशय को वहीं का वहीं रहने दिया।

मैंने कहा था ना! कि कभी कभी शब्द के आधार से ही सत्य के करीब जाया जा सकता है।

यहाँ प्राण और अपान ये दो शब्दों के लिए तीन मतभेद हैं –

१. तंत्र और योगविज्ञान भीतर से बाहर आने वाले को प्राण कहते हैं।
२. आधुनिक विज्ञान प्राण के सूक्ष्म अर्थ को ग्रहण न करते हुए वातावरण का ओक्सीजन वायु जो मनुष्य नासिका के द्वारा भीतर लेते हैं उस वायु को प्राण कहते हैं। और नासिका द्वारा बाहर फँकी जा रही वायु को कार्बनडाइऑक्साईड कहते हैं। विज्ञान ने अभी तक प्राण और अपान की अति सूक्ष्म और आध्यात्मिक स्तर पर खोज की ही नहीं है। विज्ञान के पास प्राण और अपान को व्यक्त करने के लिए कोई विशेष शब्द नहीं है। वह बाहर फँकी हुई वायु को अशुद्ध वायु कहते हैं। परंतु वह वायु रात में वृक्ष के लिए शुद्ध वायु बन जाती है। सापेक्षवाद के सिद्धांत के अनुसार कुछ भी अशुद्ध नहीं है।
३. आयुर्वेद ने वायु के भिन्न भिन्न पांच नाम दिए हैं जो शरीर के विभिन्न अंगों में रहकर विविध कार्य करते हैं। उसके अनुसार नाभि के नीचे के भाग में अर्थात् मलाशय आदि में अपान वायु का स्थान है और हृदय में प्राणवायु का स्थान है।

परंतु यहाँ साधक को प्राण अपान दोनों शब्दों का योग और तंत्र शास्त्र के अनुसार जो अर्थ है अथवा इस ध्यान विधियों में जो अर्थ ग्रहण करना है उस खास अर्थ को समझाने के लिए मैंने इतनी चर्चा की। ताकि आप शब्दों के संदर्भ में संशयमुक्त होकर विधि में आगे बढ़ सकें।

प्यारे साधको!

तंत्र विज्ञान कहता है कि उस वायु के साथ आपको कुछ करना नहीं है। वायु का स्वभाव ही चल है, उसको स्थिर नहीं करना है परंतु आपको उसकी गति के साथ लय साध लेनी है। उस लय के सधते ही साधक का मन तिरोहित हो जाता है और शांति की प्राप्ति होती है। योग शास्त्र एक आंतरिक विज्ञान की दृष्टि से वायु का नामकरण करके उसे प्राण और अपान नाम देते हैं। खैर, अब आईए विधि की ओर।

श्वास प्रश्वास की विधियों के अंतर्गत यह विधि भी सहज, सरल और सुन्दर विधि है। प्राण और अपान का मिलन दो स्थान पर होता है। एक आपके भीतर और दूसरा आपके बाहर (एक फीट तक की सीमा में)।

प्रिय साधको!

हृदय में तो प्राण का स्थान है ही। और बाहर से लिया हुआ अपान वायु भीतर हृदय तक पहुँचकर हृदय में प्राण नामक वायु के साथ मिल जाता है और भीतर की वायु बाहर आकर बाहर के अपान (नहीं पिया हुआ वायु) के साथ मिल जाती है। यह एक निरंतर घटित होती प्रक्रिया है।

ध्यान विज्ञान कहता है कि उन दोनों बिन्दुओं पर लक्ष्य देकर उसका सहज बोध करते रहे, ज्ञान का उदय हो जाएगा।

प्यारे साधको!

अगर आप सच्चे ध्यान प्रेमी हो, अगर आपका संग रहा है ध्यान से, ध्यानी और योगी आत्माओं से तो आपने उनके पास से सुना होगा कि हृदयकमल पर ध्यान करो। बहुत सारी विधियाँ हृदय चक्र पर हैं। क्यों?

इसका प्रमुख कारण यह है कि उस बिन्दु पर सहज ही श्वास के आवागमन की प्रक्रिया स्थिर हो जाती है। यहाँ वायु के साथ कुछ ज्यादा लेना देना नहीं है। श्वसन तंत्र की क्रिया का संदर्भ नहीं है। परंतु श्वास के कुदरती आवर्तनों में क्षणभर के लिए अक्रिया घटित होती है। जिसका दृष्टा बने रहना है। हृदय में प्रतिपल असंख्य भाव पैदा होते रहते हैं। उनमें से कुछ भाव हानिकारक भी होते हैं। हृदयकमल पर ध्यान करने से भाव तरंगें शांत हो जाती हैं।

उसके दृष्टा बने रहने से सहज ही मन विसर्जित हो जाएगा और ज्ञान का उदय हो जाएगा।

ऐसा ही एक विराम बिन्दु बाहर भी है। आपने अधखुले नेत्रों वाले और नासिका की नौक पर स्थिर दृष्टि करती हुई शिव की प्रतिमा या छबि देखी होगी। वह प्रतिमा बाहरी श्वास पर चित्त को रोकने का बोध कराती है।

आप भी ऐसा अभ्यास करेंगे तो आप का मन भी ठहर जाएगा। आपके लिए अ-मन होना सहज हो जाएगा इस मुद्रा में। यह मुद्रा श्वास के बाहर के मिलन बिन्दु पर चित्त के ठहर जाने का परिणाम है।

शिव ने कोई खास पोझ देने के लिए ऐसी मुद्रा नहीं बनाई थी। ध्यानस्थ अवस्था में जो ध्यान की छबि आकार लेती है वैसी मुद्रा आयास प्रयास से नहीं हो सकती।

अब एक बार फिर से देखना शिव के अधखुले नेत्रों वाली नासिका की नौक पर दृष्टि टिकाई हुई छबि को। मैंने कच्छ में ध्यान प्रेमियों के लिए अंजार शहर के पास ध्यान तीर्थ की स्थापना की है वहाँ ध्यानदेव और स्थानदेव के रूप में ध्यानी को सदंतर प्रेरणा मिलती रहे इसलिए शिव की इसी ध्यानविधि में मग्न ऐसी एक विराट प्रतिमा की स्थापना की है। कभी वहाँ जाकर अवश्य ध्यान करना। फिर बैठ कर करना यह ध्यान।

जैसे ही आप खुली आँखों से श्वास के ठहराव बिन्दु पर स्थिर होंगे तो आपके चहरे की मुद्रा में भी ऐसी छबि का निर्माण हो जाएगा। यह छबि बोध, स्थिरता, शांति, ध्यानमग्नता, एवं ज्ञानोदय का प्रतीक है।

प्रिय साधको !

भीतर और बाहर श्वास के दोनों विराम बिन्दुओं को देखते देखते सहजता से ज्ञान को प्राप्त हो जाओ। यह देखना अति सूक्ष्म है। यह कोई आँखों से नाक की नौक को देखने की बात नहीं है, यह देखना इन्द्रियगम्य नहीं है; यह एक इन्द्रियातीत दर्शन है, एक सूक्ष्म दर्शन है।

प्राणों का दो मिलन बिन्दु पर ठहरना और उन्हें देखने का अर्थ है आपके पूरे अस्तित्व के साथ मिल जाना। चेतना के द्वारा अनुभव करना उन बिन्दुओं का।

मैं कहती हूँ, घुल मिल जाओ अपने श्वास के साथ। तब पता चलेगा कि वह बिन्दु कहाँ है ? कोई मनुष्य यात्रा कर रहा हो और वह कौन कौन से पड़ाव पर रुकता है उसको पूरी तरह से जानने के लिए आपको उसके साथ यात्रा करनी पड़ेगी। आप ट्रेन में बैठे हो परंतु ट्रेन किन किन स्टेशनों पर रुकती है, इसका अनुभव करने के लिए यात्रा में आपको जागना पड़ेगा।

वैसे ही श्वास जहाँ जहाँ ठहरता है उन स्थानों को जानने के लिए आपको श्वास की गति में खो जाना पड़ेगा, उसके संग हो लेना पड़ेगा, श्वासमय बन जाना पड़ेगा क्योंकि यह एक सूक्ष्म यात्रा है। नक्शे पर के तीर्थ स्थानों को देखकर आप यात्रा का सही आनंद नहीं ले पाएंगे। वैसे ही शास्त्र की ध्यान विधियाँ एक नक्शे का काम करती हैं। केवल शास्त्र को पढ़कर आप ध्यान का पूरा पूरा आनंद नहीं ले पाएंगे।

सूक्ष्म को जानने के लिए आपको सूक्ष्म बनना पड़ेगा अर्थात् चेतना के सूक्ष्म स्तर में उतरकर फिर उसे बहाना होगा श्वास के साथ।

जैसे जैसे आप विलीन हो जाएंगे श्वास में वैसे वैसे आत्मबोध घटने लगेगा। आप अचानक जान जाएंगे कि उन क्षणों में ही महाजीवन और दिव्य शांति है।

श्वास के साथ चलना श्वास के साथ ठहरना, भीतर और बाहर ठहरते ठहरते एक क्षण ऐसा आएगा कि आपका आवागमन ठहर जाएगा। आप जन्म मृत्यु से मुक्त हो जाएंगे हमेशा हमेशा के लिए। इसे ही तंत्र शास्त्र ज्ञानोदय कहता है।